वैश्विक संवाद GLOBAL DIALOGUE

सूचना पत्र

GDN 5

अंक 1 / क्रमांक 5 / जुलाई 2011

वैश्विक समाजशास्त्र के लिए आदर्श–लोक

एरिक ऑलिन राइट

विकास न्याय के रूप में: एक भारतीय वास्तविक आदर्श–लोक

कल्पना कन्नाबिरन

जल अन्याय से मुकाबला

जो एस्टेबन कास्त्रो

> वैश्विक श्रम पर परिचर्चा
> राबर्ट मर्टन के सम्मान में
> केटेलोनिया के युवा समाजशास्त्री
> मध्य–पूर्व में समाजशास्त्र की गतिशीलता
> इतिहास का कोना : आई.एस.ए. का क्रमविकास
> सार्वजनिक समाजशास्त्र: स्पेनिश क्रांति
> सम्पादक के नाम पत्र : गोबर निदर्शन
> सम्पादकों का परिचय : पोलिस्ता दल
> मानवाधिकार : यू.के. में प्रति–आतंकवाद

International Sociological Association

> सम्पादकीय

समाजशास्त्र ने यह दर्शाने के लिए कि दुनिया अन्य रूप से भी हो सकती है, वर्तमान को हमेशा अभाग्यवादी एवं विप्रकृत करने का प्रयास किया है।

अतः वैश्विक संवाद (ग्लोबल डायलाग) के इस पाँचवें अंक में हम इरिक राइट (Erik Wright) द्वारा विकसित विचार 'रियल यूटोपिया' (वास्तविक आदर्श–लोक) जो पूंजीवाद के तर्क को चुनौती देने वाली वर्तमान संस्थाओं को इंगित करता है, की चर्चा से प्रारम्भ करते हैं। इसके बाद आने वाले लेख वास्तविकता मूलक आदर्शलोक के विचारों का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। कल्पना कन्नाबीरन भारतीय दृष्टि से एक वास्तविकता मूलक आदर्शलोक विकास न्याय के रूप में; टेरेसा सोर्ड एवं तातियाना सान्टोज स्पेन में हाल ही होने वाले सहभागी प्रजातन्त्र के प्रयोग का विवरण और जो एस्टेबन केस्त्रो लेटिन अमेरिका में जल अन्याय के बारे में लिखते हैं। प्रख्यात श्रम समाजशास्त्री वास्तविकता मूलक आदर्शलोक के विचार को एक नई दिशा में ले जाते हैं। वे वैश्विक समाजशास्त्र की बहस में आधिपत्य विरोधी वैश्विकरण (counter-hegemonic globalization) के विचार की ग्वेषणा करते हैं। एडवर्ड वैबस्टर (Edward Webster) दक्षिण अफ्रीका से, पन नगई (Pun Ngai) चीन और एनरिक द ला गार्जा (Enrique de la Garza) मेक्सिको के परिपेक्ष्य से वैश्विक श्रम आन्दोलनों की चर्चा करते हैं। फरीद अलातास (Farid Alatas) तेहरान में होने वाले मध्य–पूर्व के बहु–प्रतीक्षित सम्मेलन का और एना विदु (Ana Vidu) बार्सिलोना में आयोजित युवा समाजशास्त्रियों के सम्मेलन का ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं। नादिया एश्यूलोवा (Nadia Asheulova) और जैमे जिमेनेज (Jaime Jiménez) आर.सी. 23 द्वारा विज्ञान के महान समाजशास्त्री राबर्ट मर्टन के सम्मान में आयोजित कार्यक्रम पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हैं। विशिष्ट स्तम्भ विश्वविद्यालयों द्वारा आतंक विरोधी गतिविधियों में सहयोग करने से अकादमिक स्वतन्त्रता को खतरा; आई.एस.ए. की द्विसदनीय (bicameral) संरचना का इतिहास; एवं उष्ण अफ्रीका में काउडंग निदर्शन की चर्चा करते हैं।

अंत में, हम एक नया स्तम्भ, जो हमारी विभिन्न सम्पादकीय दलों का परिचय कराता है, शुरू कर रहे हैं। इस संदर्भ में मुझे तेहरान के युवा समाजशास्त्रियों के दल का स्वागत करने में हर्ष महसूस हो रहा है। यह दल वैश्विक संवाद (ग्लोबल डायलाग) को हमारी दसवीं भाषा – फारसी (पर्शियन) में अनुवादित करेगा।

वैश्विक संवाद (ग्लोबल डायलाग) फेसबुक एवं आई. एस.ए. की वेबसाइट पर देखा जा सकता है।

> इस अंक में In This Issue

सम्पादकीय	2
वैश्विक समाजशास्त्र के लिए वास्तविक आदर्शलोक	3
विकास न्याय के रूप में : एक भारतीय आदर्शलोक	5
लेटिन अमेरिका में जल अन्याय से मुकाबला	8

> वैश्विक श्रम पर परिचर्चा Debate Over Global Labor

– दक्षिण अफ्रीकी परिप्रेक्ष्य	13
– चीनी परिप्रेक्ष्य	15
– मेक्सिकन परिप्रेक्ष्य	17

> सम्मेलन Conferences

राबर्ट मर्टन के सम्मान में	7
केटेलोनिया के युवा समाजशास्त्री	10
मध्य–पूर्व में समाजशास्त्र की गतिशीलता	20

> विशेष स्तम्भ Special Columns

इतिहास का कोना : आई.एस.ए. की विकसित होती संरचना	7
सार्वजनिक समाजशास्त्र : स्पेनिश क्रांति	11
सम्पादक के नाम पत्र : गोबर निदर्शन	18
सम्पादकों का परिचय : पोलिस्ता दल	19
मानवाधिकार : यू.के. में प्रति–आतंकवाद	21

> Editorial Board

Editor: Michael Burawoy.

Managing Editors: Lola Busuttil, August Bagà, Genevieve Head-Gordon.

Associate Editors: Margaret Abraham, Tina Uys, Raquel Sosa, Jennifer Platt, Robert Van Krieken.

Consulting Editors: Izabela Barlinska, Louis Chauvel, Dilek Cindoglu, Tom Dwyer, Jan Fritz, Sari Hanafi, Jaime Jiménez, Habibul Khondker, Simon Mapadimeng, Ishwar Modi, Nikita Pokrovsky, Emma Porio, Yoshimichi Sato, Vineeta Sinha, Benjamin Tejerina, Chin-Chun Yi, Elena Zdravomyslova.

Regional Editors

Arab World: Sari Hanafi and Mounir Saidani.

Brazil: Gustavo Taniguti, Juliana Tonche, Pedro Mancini, Fabio Silva Tsunoda, Dmitri Cerboncini Fernandes, Andreza Galli, Renata Barreto Pretulan.

India: Ishwar Modi, Rajiv Gupta, Rashmi Jain, Uday Singh.

Japan: Kazuhisa Nishihara, Mari Shiba, Yoshiya Shiotani, Kousuke Himeno, Tomohiro Takami, Nanako Hayami, Yutaka Iwadate, Kazuhiro Ikeda, Yu Fukuda.

Spain: Gisela Redondo.

Taiwan: Jing-Mao Ho.

Iran: Reyhaneh Javadi, Saghar Bozorgi, Mitra Daneshvar, Shahrad Shahvand.

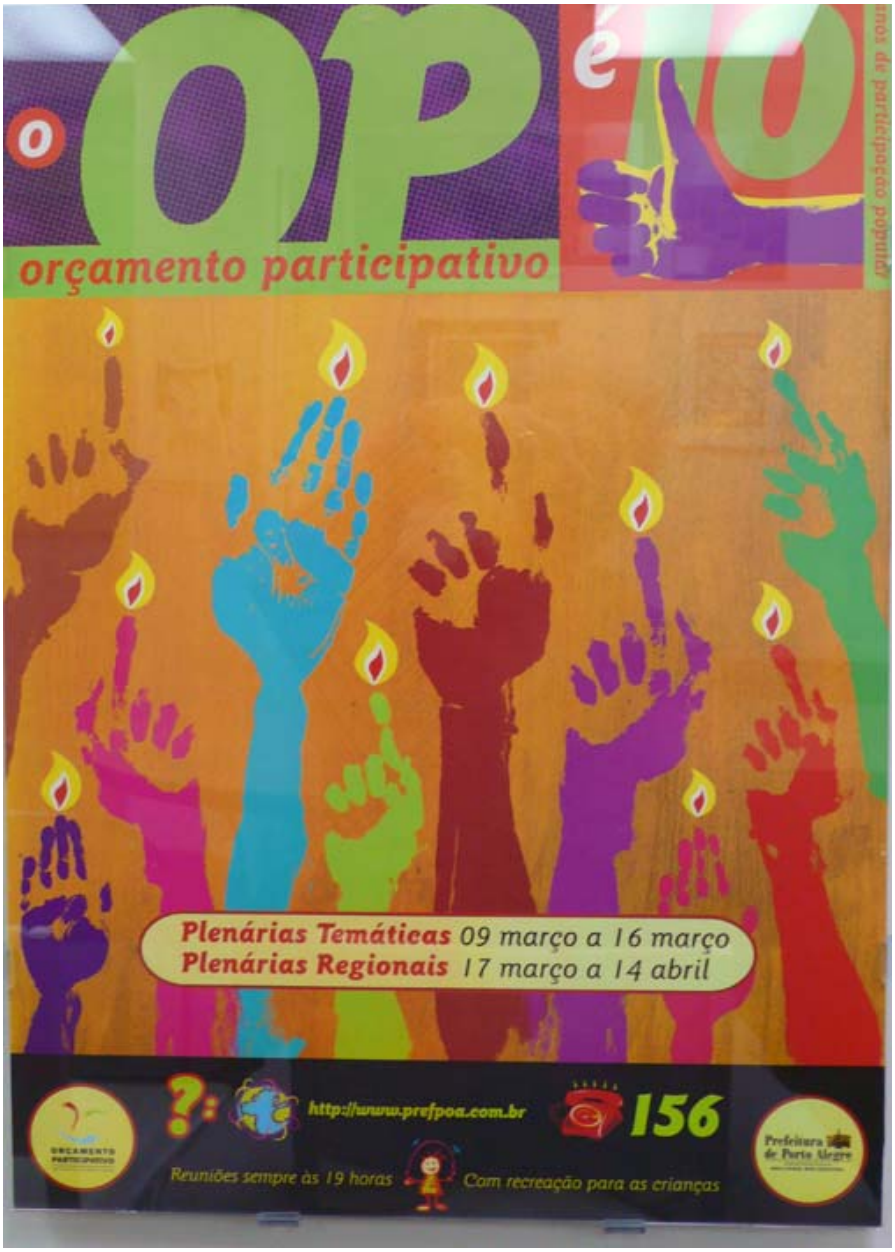

> वैश्विक समाजशास्त्र के लिए वास्तविक आदर्शलोक

एरिक ऑलिन राइट, विस्कान्सिन विश्वविद्यालय, मेडिसॅन

एरिक राइट अमेरिकन सोशियोलोजिकल एसोसियेशन के निर्वाचित अध्यक्ष हैं। उनका अध्यक्षीय भाषण का मुद्दा ''वास्तविक आदर्शलोक का स्वप्न'' होगा जो कि उनकी हाल मे प्रकाशित पुस्तक का शीर्षक भी है। मैने उनसे यह अनुरोध किया कि वे पन्द्रह सौ से कम शब्दो में यह बताऐं कि वास्तविक आदर्शलोक का अर्थ क्या है एवं वैश्विक समाजशास्त्र के लिए उसकी उपादेयता क्या है। क्या आपकी दृष्टि में वे ऐसा कर पाए हैं?

वास्तविक आदर्शलोक का विचार आलोचनात्मक समाजशास्त्र के सभी स्वरूपों में एक आधारभूतीय दावा है। हम एक ऐसे विश्व में रहते हैं जहाँ मनुष्य अनेक समस्याओं से घिरा हुआ हैं। मनुष्य के उन्नयन में अनेक कमियाँ हैं अथवा बाधाएं हैं जो उन तरीकों का परिणाम हैं जिनके द्वारा हमने सामाजिक संरचनाओं एवं संस्थाओं को संगठित किया है। प्रचुरता के मध्य विश्व के अनेक देशों में व्याप्त निर्धनता यह व्यक्त नहीं करती कि प्रकृति के नियम अपरिवर्तनीय हैं। निर्धनता विद्यमान शक्ति एवं असमानता के सामाजिक संगठनों कि दिशा से उत्पन्न हुई है और मनुष्य के उन्नयन की संभावनाओं को व्यापक रूप सें प्रभावित करती है। यह आधारभूतीय दावा आलोचनात्मक समाजशास्त्र के लिए तीन केन्द्रीय लक्ष्यों को निर्मित करता है– (1) मनुष्य के उन्नयन को नुकसान पहुंचाने वाले सामाजिक कारणों की जाँच (2) वैकल्पिक संस्थाओं एवं संरचनाओं की विवेचना (3) रूपांतरणन के सिद्वांत का विकास जो हमें यह दिशा दे सके कि हम किस प्रकार इन अवरोधों से मुक्त हो सकते हैं। वास्तविक आदर्शों का अध्ययन एक ऐसा तरीका है जिससे ऊपर दिये गए दूसरे लक्ष्य को समझा जा सकता है या उस तक पहुँचने की कोशिश हो सकती है।

'वास्तविक आदर्श–लोक' मे 'आदर्श–लोक' का अभिप्राय उन महत्वपूर्ण संस्थाओं के विकल्पों के विषय में सोचना है जो एक न्यायोचित एवं मानवीय मूल्यों से बनने वाले विश्व की हमारी आकांक्षाओं को और अधिक गहरा कर सके। मूलतः यह एक नैतिक मुद्दा है।

यह हमारे उन नैतिक मापकों की तरफ ध्यान दिलाता है जिनके द्वारा संस्थाओं का मूल्यांकन किया जाए और यह जानने की कोशिश की जाए कि वैकल्पिक संस्थात्मक ढाँचें किस प्रकार उपरोक्त मूल्यों की प्राप्ति में सहायक होंगे। 'वास्तविक आदर्श–लोक' में 'वास्तविक' का अभिप्राय भी शक्तिशाली संस्थाओं के विकल्पों की खोज है। परन्तु साथ ही यह 'वास्तविक' गैर इरादतन परि–णामों एवं स्व–विनाशक गत्यातकमता पर भी केन्द्रित होता है। हमें आज यह जरूरत है कि स्पष्ट एवं गहनता मूलक प्रारूप, जो कि विद्यमान सामाजिक संस्थाओं के संवेदनात्मक स्वीकार्य विकल्प हों, उभरें। इन प्रारूपों में मनुष्य के उन्नयन की गहन आकांक्षाओं एवं कार्यरत संस्थाओं की व्यावहारिकता से जुड़े विभिन्न पक्षों का समावेश हो। यदि ऐसा होता है तो आकांक्षाओं को वास्तविक विश्व का अंग बनाने की तरफ हम ध्यान केन्द्रित कर लेंगे।

वास्तविक आदर्श–लोकों का अन्वेषण केवल 'वास्तविक के समाजशास्त्र' को ही नहीं अपितु 'सम्भव के समाजशास्त्र' को भी विकसित करता है। पर ऐसा हम महज कुर्सी पर बैठकर आराम से अनुमान लगाने की आदत के आधार पर नहीं कर सकते। हमें एक सर्वाधिक उपयोगिता मूलक रणनीति के अन्तर्गत सक्रिय होना होगा। इस रणनीति के अन्तर्गत हमें विद्यमान वास्तविक सामाजिक स्थितियों में उन तत्वों की तलाश करनी होगी जो शक्तिशाली संस्थाओं के मूल तर्कों का उल्लंघन करते हों। यह उल्लंघन उस प्रकृति का हो जो मुक्ति की आकांक्षा को समर्थन दे एवं व्यापक आदर्शात्मक विकल्प में कहीं न कहीं उपस्थित हो। अनुसंधान का उद्धेश्य यह है कि ये तत्व किस रूप में व कैसे सक्रिय हैं एवं उन तरीकों को जानना है जिनसे मनुष्य का उन्नयन तीव्र होता है। इन तत्वों की परिसीमाएं, अन्तर्विरोध एवं गैर इरादतन परिणामों को भी जानना जरूरी है साथ ही यह भी समझना है कि विकल्पों एवं तत्वों को कैसे विकसित किया जाए एवं इनकी पहुँच का दायरा व्यापक बनें। इस प्रकार के अनुसंधानों का चरित्र प्रोत्साहन मूलक होता है साथ ही वादा मूलक प्रयोगों के तत्वों को इन अनुसंधानों मे जगह बिना किसी आलोचना के सम्भवतया मिल जाती है। ऐसी स्थिति में खतरा पागलपन की तरह का हो जाता है, कमियों को एक मात्र यथार्थ की तरह देखा जाता है एवं सम्भावनाओं को भ्रम की तरह परखा जाता है।

प्रेरणामूलक आनुभविक प्रघटनाओं का अध्ययन वास्तविक आदर्शो का केवल एक भाग

>>

है। केवल आनुभविक प्रघटनाओं पर संकेन्द्रण उन विकल्पों को संकुचित कर देता है अथवा सीमित कर देता है जो विशिष्ट प्रकार की सामाजिक संस्थाओं के लिए उत्पन्न करने है। यह संकेन्द्रण सामाजिक संगठन के सूक्ष्म पक्ष पर सिमट जाता है। हमें उस समझ की आवश्यकता है जो 'अन्य विश्व सम्भव है' के विचार को वृहद स्तर पर स्थापित करती है और जिसे सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था की क्रियाशीलता के संदर्भ से जोड़ा जा सकता है। पूंजीवाद एवं समाजवाद के महत्व–पूर्ण व ऐतिहासिक अन्तर्विरोधों के दौरान अतीत में भी इस प्रकार के सवाल उभरे थे। व्यवस्था के स्तर पर इस प्रकार के विकल्प के अन्वेषण हेतु आवश्यक है कि सामाजिक एवं आर्थिक संरचनाओं के विभिन्न प्रारूपों के अमूर्त सैद्वान्तिक विश्लेषणों को तलाशा जाए। वास्तविक आदर्शलोकों का समाजशास्त्र पूर्णरूपेण विकसित रूप में दो पक्षों को एकीकृत करता है–प्रथम, मुक्तिगामी विकल्पों को रूप देने वाली संस्थाओं के मूर्त आनुभाविक अध्ययन एवं द्वितीय, वैकल्पिक व्यवस्थाओं से जुड़े हुए आधारों के अमूर्त सैद्वान्तिक विवेचन।

इस छोटे लेख में पूर्ण विवेचना को स्थान नहीं दिया जा सकता। हम यह कर सकते हैं कि दो आनुभविक प्रघटनाओं का उदाहरण प्रस्तुत कर वास्तविक आदर्शलोकों के अध्ययन की आधारभूतीय जरूरतों को सामने लाया जाए। ये दोनों ही उदाहरण विद्यमान संस्थाओं के स्थान पर रेडिकल, लोकतान्त्रिक विकल्पों की आदर्शलोक दृष्टि प्रस्तुत करते हैं हालांकि ये उदाहरण आंशिक एवं अपूर्ण हैं। इन उदाहरणों में से एक वैश्विक दक्षिण से तथा दूसरा वैश्विक उत्तर से है।

> नगरीय सहभागिता पर आधारित बजटिंग :

एक जटिल आधुनिक समाज में अधिकांश व्यक्तियों की दृष्टि में यह अव्यावहारिक विचार है कि 'प्रत्यक्ष लोकतन्त्र' की अवधारणा के अन्तर्गत एक राजनीतिक सभा में नागरिक व्यक्तिगत या निजी स्तर पर लोकतान्त्रिक निर्णयों हेतु सहभागिता करें। 'सहभागिता आधारित बजटिंग' के रूप में हुआ विकास इस प्रकार के विद्यमान अव्यावहारिक विचार के सम्मुख एक प्रभावी वास्तविक आदर्शात्मक चुनौती है।

मूल कथ्य यह है कि एक आकस्मिक घटना की तरह 1989 में ब्राजील के पोर्टो एलेग्रे नगर में सहभागिता आधारित बजटिंग प्रारम्भ हुई। ब्राजील के दक्षिण–पूर्वी केन्द्र में स्थित पोर्टो एलेग्रे नगर की जनसंख्या लगभग पन्द्रह लाख है। 1988 के अन्त में सैनिक तानाशाही को लम्बे समय तक भुगतने के बाद एवं लोकतन्त्र की तरफ की यात्रा के संक्रमणकाल के उपरान्त इस नगर में मेयर के चुनाव में वामपन्थी दल की विजय हुई परन्तु नगर परिषद पर वामपन्थी दल का नियन्त्रण नहीं हो सका। परिणाम स्वरूप यह दल अपने प्रगतिशील राजनीतिक कार्यक्रम को क्रियान्वित करने में सफल नहीं हो सका हालांकि मेयर पद पर उनका कार्यकाल चार वर्ष तक रहा।

इस स्थिति का मुकाबला करते हुए इस दल के राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं ने एक मुख्य सवाल उठाया कि क्या किया जाए? इस प्रश्न के उत्तर के रूप में एक महत्वपूर्ण संस्थागत नवाचार उभर कर आया और वह था सहभागिता आधारित बजट अर्थात् एक नया विचार कि सामान्य नागरिकों की प्रत्यक्ष सहभागिता को प्रोत्साहित कर बजट की रचना की जाय। बजाय इसके कि उच्च से लेकर निम्न पदों पर बैठें अधिकारियों/प्रतिनिधियों की सहभागिता से बजट की रचना हो। पोर्टो एलेग्रे कुछ क्षेत्रों में विभाजित है और प्रत्येक क्षेत्र में एक बजट सभा है जो सहभागिता आधारित है। इसके साथ ही नगर आधारित बजट समाएं हैं जो कि विभिन्न विषयों को लेकर बनी हैं जो समूची म्युनिसपैल्टी से जुड़े हैं। सांस्कृतिक उत्सव या सार्वजनिक यातायात ऐसे विषयों के उदाहरण हैं। प्रत्येक सहभागिता आधारित बजट सभा के लिए यह जरूरी है कि वह विभिन्न विषयों विशेषतः आधारभूत सुविधाओं से जुड़े पक्षों पर मूर्त बजट प्रस्तावों को प्रस्तुत करे। नगर का कोई भी निवासी इन सभाओं में सहभागिता कर सकता है और प्रस्तावों पर अपना मत (वोट) देने का अधिकारी है। इन क्षेत्रीय एवं विषय केन्द्रित बजटों को बनाकर ये सभायें अपने प्रतिनिधि चुनती हैं जो कुछ महीनों तक पूरे नगर (सिटी–वाइड) की बजट काउन्सिल में सहभागिता करते हैं यह सहभागिता तब तक चलती है जब तक कि समग्र एवं व्यवस्थित रूप में नगर का बजट पारित नहीं हो जाता।

1990 के दशक के प्रारम्भ से ही पोर्टो एलेग्रे नगर में सहभागिता आधारित बजट प्रभावी रूप से क्रियाशील है। कुछ वर्षों में यह बजट प्रक्रिया अत्यन्त सक्रिय हुई और नगर बजट सम्बन्धी चर्चाओं में हजारों निवासियों ने सहभागिता की जबकि कुछ वर्ष ऐसे भी आये हैं जब व्यय के अधिकार सीमित हो गये फलस्वरूप सहभागिता की दर में कमी आयी। पर सभी दृष्टियों से सहभागिता आधारित बजट ने नगर के विभिन्न मुद्दों पर जन सहभागिता के प्रभावी योगदान को स्थापित किया एवं नगर पर होने वाले व्यय को गरीबों के हितों की तरफ ले जाने में मदद की न कि अभिजनों के हितों की तरफ। सब मिलाकर सहभागिता आधारित बजट ने लोकतन्त्र को इतना व्यापक एवं गहरा किया है जो उस सीमा के भी परे है जैसी कि सोची गयी थी।

सहभागिता आधारित बजट का यह प्रयोग जो पोर्टो एलेग्रे में हुआ अब विश्व के लगभग एक हजार नगरों द्वारा अपनाया जा चुका है। इसके रूप थोड़े बहुत भिन्न जरूर हैं। यह एक ऐसा उदाहरण है जो बताता है कि किस प्रकार एक वास्तविक आदर्शलोक का नवाचारी रूप वैश्विक दक्षिण में शुरू हुआ और विश्व के विकसित क्षेत्रों में पहुँच गया।

> विकीपीडिया

कल्पना कीजिए कि सन् 2000, में जब विकीपीडिया अस्तित्व में नहीं आया था, किसी ने यह प्रस्ताव किया कि वह दस वर्ष के अन्दर एक एनसाईकिलोपीडियॉ की रचना करेगा जिसमें लगभग 3.5 मिलियन इंग्लिश की प्रविष्टियाँ होंगी जिनकी उपयुक्त गुणवत्ता होगी। यह एक ऐसा पहला प्रयास होगा जो विभिन्न प्रकार के विषयों पर लाखों लोगों को प्रारम्भिक जानकारी देने में सक्षम होगा। फिर यह मानिये कि वह व्यक्ति निम्नलिखित संस्थागत डिजाइन प्रस्तावित करे जिससे एनसाइक्लोपीडिया (विश्वकोष) को निर्मित व वितरित किया जाए। (i) प्रविष्टियों को लाखों व्यक्तियों द्वारा जो समूचे विश्व के होगें, बिना किसी पारिश्रमिक के लिखा एवं सम्पादित किया जाय (ii) कोई भी सम्पादक हो सके एवं कोई भी किसी भी प्रविष्टि को, जो एनसाइक्लोपीडिया में है, सम्पादित कर सकें (iii) इस एनसाइक्लोपीडिया तक सबकी पहुँच हो और विश्व में यह किसी के लिए भी निशुल्क उपलब्ध हो। यह कल्पना असम्भव लगती थी कि हजारों व्यक्ति एक उच्च गुणवत्ता वाले एनसाइक्लोपीडिया की रचना में संलग्न हों, वे निशुल्क इसकी रचना करें और फिर बिना किसी शुल्क के इसका वितरण ऐसे दौर में करें जहाँ आर्थिक सिद्धान्त यह विचार रखें कि बड़े पैमाने पर सहयोग हेतु आर्थिक प्रोत्साहन जरूरी है और उत्पादन को व्यवस्थित रखने हेतु संस्तरण जरूरी है। विकीपीडिया ज्ञान के सृजन एवं ज्ञान की साझेदारी को प्रस्तुत करने का पूंजीवादी–विरोधी एवं समानता मूलक माध्यम है।

विकीपीडिया साम्यवाद के इस सिद्धान्त पर आधारित है कि ''प्रत्येक को उसकी आवश्यकतानुसार प्रदान किया जाए और प्रत्येक से उसकी दक्षतानुसार वह प्राप्त करे''। यह विचार एवं इससे जुड़ा विकीपीडिया 'क्षैतिज पारस्परिकता' के मूल सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करता है न कि यह संस्तरणात्मक नियन्त्रण के सिद्धान्त से संगठित होता है। विकीपीडिया ने दस वर्ष से भी कम समय में एनसाइक्लोपीडियाज (विश्वकोषों) के उस व्यावसायिक बाजार को छिन्न भिन्न कर दिया है जो 18वीं शताब्दी से चला आ रहा था।

विकीपीडिया इस दृष्टि से एक ऐसा महत्व–पूर्ण उदाहरण है जो डिजीटल युग में गैर पूंजीवादी, गैर बाजारवादी उत्पादन के रूप में स्थापित होता है। विकीपीडिया मित्र से मित्र, सहयोगात्मक एवं सामूहिकता के महत्व को व्यक्त करता एक गैर व्यावसायिक उत्पादन है। उत्पादन के ये नये स्वरूप परिणाम के रूप में सूचना अर्थतन्त्र के अनेक वास्तविक आदर्शात्मक पक्षों से जुड़ जाते हैं जैसे सृजनात्मक सामान्य (creative commons), कापीलेफ्ट लाइसेन्सिंग एवं खुला स्रोत साफ्टवेयर (open source software) हालांकि अभी यह देखा जाना बाकी है कि उत्पादन के ये नवीन स्वरूप किस प्रकार बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार के परिपाटीय पूंजीवादी स्वरूप के लिए दमनात्मक होगें या प्रभुत्वशाली पूंजीवाद के अन्तर्गत ये नवीन स्वरूप आर्थिक प्रकारों की विविधता में वृद्धि करेंगे।

ये दो उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि समकालीन संस्थाओं में निहित शक्ति के संगठन एवं असमानता के विरूद्ध सामाजिक विकल्पों के मुख्य विचार उभारे जा सकते हैं। ये एवं ऐसे अनेक उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि सामाजिक अन्तः क्रिया के समतावादी एवं लोकतान्त्रिक स्वरूपों को जन्म दिया जा सकता है। मनुष्य के उन्नयन की स्थितियों को रूपान्तरित करने हेतु ये आदर्शात्मक आकांक्षाओं को भी प्रस्तुत करते हैं। हालांकि वास्तविक संस्थाओं में इन आदर्शात्मक आकांक्षाओं को समाहित करने के लिए अभी अनेक एवं व्यापक प्रयासों की आवश्यकता है। इन सम्भावनाओं को समझना ही वास्तविक आदर्श–लोकों के एजेण्डा का मुख्य बिन्दु है। ■

> न्याय के रूप में विकास : भारत से उभरता एक वास्तविक आदर्शलोक

कल्पना कन्नाबिरन, काउन्सिल फॉर सोश्यल डवलपमैण्ट, हैदराबाद, आई.एस.ए. कार्यक्रम कमेटी

झारखण्ड में राज्यपाल के निवास के सामने विस्थापन के विरोध में प्रदर्शन करते हुए आदिवासी

भारत में विकास का गहन विमर्श आन्तरिक रूप में उतना ही विविधता मूलक है जितनी कि हमारे जंगलों पहाड़ों एवं वन्य भूमि में व्याप्त आश्चर्यचकित करने वाली जैव–विविधता विद्यमान है हालांकि यह दुर्भाग्यजनक है कि यह विविधता हमें अपेक्षा के अनुरूप ऊर्जा नहीं दे पा रही क्योंकि कहीं पर भी हम इस विविधता को संरक्षित नहीं कर पा रहे हैं। मैं इस विमर्श के माध्यम से यह स्थापित करने का प्रयास करूंगी कि आदिवासी समुदाय एवं संविधान तथा कानून के साथ हमारी सामूहिक सम्बद्धता के मध्य कुछ सम्बन्ध हैं। मैं इस पक्ष को अपने अध्ययन से उभरे कुछ विचारों के द्वारा स्पष्ट करूंगी।

प्रारम्भ में इस विचार को स्वीकारना आवश्यक है कि 'विकास' की अवधारणा को व्यक्त करने के अनेक तरीके हैं। विकास का मुख्य रूप से सम्बन्ध 'विस्थापन', 'बड़े बाँध', 'पर्यावरणीय ह्रास', 'हरित क्रान्ति', 'आर्थिक वृद्धि', 'खनन', 'हथियारों के व्यवसाय', 'देशज ज्ञान का उपयोग', व्यापार, उदारीकरण एवं वैश्वीकरण जैसी अवधारणाओं से है। विकास के इन पक्षों के क्रियान्वयन में न केवल अनेक उलझाव हैं अपितु दूसरी ओर महत्वपूर्ण रूप में उभरे प्रतिरोध भी हैं। परिणामस्वरूप 'अन्य विकास' (अदर डवलपमैण्ट) जैसे प्रत्यय भी उभरे हैं जिनका सम्बन्ध सतत व दीर्घकालिकता, Permaculture, पर्यावरणीय संरक्षण, पारिस्थितिकीय व्यवस्था का विकास एवं मजबूती एवं परम्परागत ज्ञान व्यवस्था से है। इन के साथ उन छोटे एवं सुनिर्धारित व किसी सीमा तक प्रतिबद्ध संघर्षों को भी सम्मिलित किया जा सकता है जो अस्तित्व की निरन्तरता को बनाये रखने, विस्थापन के विरूद्ध आवास एवं अन्य विसंगतियों के विरूद्ध विरोध की स्पष्टता को भारतीय उपमहाद्वीप में प्रस्तुत कर रहे हैं जैसे पॉस्को, वेदान्त, नर्मदा, पोलावरम तथा छत्तीसगढ़ एवं मणीपुर में हो रहे प्रतिरोध एवं अन्य अनेक आन्दोलन। ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं जिनकी संख्या से एक पुस्तक लिखी जा सकती है।

'अन्य विकास' के इस प्रारूप को प्रयुक्त करते हुए यदि हम आगे बढ़े तो इस विवाद को सामने ला सकते हैं कि बाहुल्यता एवं विविधता (सभी जीवन स्वरूपों में) इस विवाद का केन्द्रीय विचार अवयव है। अस्तित्व एवं शिष्टतामूलक जीवन के लिए संघर्षरत समुदाय एवं कार्यशील नागरिकों/विशेषज्ञों के द्वारा अन्य विकास (इस अवधारणा में निहित पक्षों पर माफी चाहते हुए भी यह कहा जा सकता है कि यह अवधारणा व्यवस्थित रूप में भी अन्य है और अनेक नियमों/प्रतिमानों से इसकी दूरी है) के इस प्रयास में इस समस्या के मूल पक्ष को नकारा या हतोत्साहित किया जाता है कि न्याय की व्यवहार रूप में प्राप्ति सम्भव नहीं है। ये संघर्षरत समूह/विशेषज्ञ न्याय की व्यावहारिक प्राप्ति सम्भव है के विचार को स्वीकारते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि विकास को स्वतन्त्रता के रूप में प्रस्तुत करें एवं उन तरीकों को बहुत सावधानी से परखा जाय, जिनके द्वारा दक्षताओं को सामने लाकर विकास लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है (इस संदर्भ में मार्था नसबाम एवं अमृत्य सैन के अनेक लेखन कार्यों को देखें) यह भी आवश्यक है कि स्वतन्त्रता एवं दक्षताओं के प्रदर्शन के चरम स्तर तक पहुँचने में होने वाले अवरोधों का पुनर्परीक्षण किया जावे और इस पुनर्परीक्षण में सम्बन्धित समाज की इतिहास विशिष्ट एवं समाज–विशिष्ट स्थितियों का ध्यान रखा जाय। यह भी समझना आवश्यक है कि वे कौन से माध्यम हैं जिनकी वजह से हमारा सामाजिक तन्त्र अल्प विकास एवं पराधीनता/स्वतन्त्रता वंचन के मुद्दों को समाविष्ट कर देता है (इस संदर्भ में पुरानी बहस को याद करें)

>>

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 से मान्यता प्राप्त 500 से अधिक अनुसूचित जनजातियाँ भारत में आदिवासी समुदायों का भाग हैं। ये जनजातियाँ पंजाब, हरियाणा, देहली, पांडिचेरी एवं चण्डीगढ़ राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों को छोड़ कर देश के प्रत्येक भाग में पायी जाती हैं। आदिवासी समुदायों का सबसे बड़ा भाग मध्य एवं पूर्वोत्तर भारत में केन्द्रित है। पूर्वोत्तर राज्यों दादरा एवं नागर हवेली तथा लक्षद्वीप में आदिवासी समुदाय का अनुपात कुल आदिवासी जनसंख्या के पचास प्रतिशत से अधिक है। इस आदिवासी समुदाय में सम्मिलित लगभग 75 समूह आदिम जनजातीय समूह (PTGs) हैं। प्रशासनिक दस्तावेजों में ये 75 समूह आवास की प्रकृति/निवास, अर्थव्यवस्था एवं जनसंख्या के आकार से सम्बन्धित संकेतों का प्रतिनिधित्व करते हैं पर इसके साथ ही इनके साथ अनेक नकारात्मक पहचानों के तत्व भी जुड़े हुए हैं।

भेदभावहीनता एवं स्वतन्त्रता वे अवयव हैं जिनका आदिवासियों के साथ दूर दूर तक सम्बन्ध नजर नहीं आता। घुमन्तु एवं अर्द्ध घुमन्तु जनजातियाँ, कृषक समूह/चरवाहा समूह (Pastoralist) एवं जनजातियाँ शिकार, खाद्यान्न संकलन एवं गतिशील/झूम खेती में व्यवसाय की दृष्टि से संलग्न हैं। इन समूहों को गतिशील भौगोलिक सीमा (mobile territoriality) के अधिकार सहित स्वतन्त्र आवाजाही की सुनिश्चितता (गारन्टी) की आवश्यकता है। अनुसूची पाँच एवं छः, जो कि भारतीय संविधान का भाग है, में सम्मिलित भौगोलिक क्षेत्रों में निवास करने वाली जन जातियों को यह सुनिश्चितता मिले कि वे इन क्षेत्रों में बेदखली के भय के बिना रह सकें और उन्हें उन स्थानों से कहीं और न जाने की स्वतन्त्रता भी मिले। गैर–अनुसूचित क्षेत्रों में निवास करने वाली जनजातियाँ जो कि अनुसूची का हिस्सा हैं को अपनी भूमि एवं आवासों के संरक्षण की सुरक्षा प्राप्त नहीं हैं भले ही यह भूमि एवं आवास उनके पास अनेक पीढ़ियों से स्वामित्व में हों।

इन सभी दृष्टान्तों में, स्वतन्त्रता का अधिकार भौगोलिक सीमा की परिभाषाओं के अन्तर्गत अभिव्यक्त होता है। भौगोलिक सीमा को यहाँ मातृभूमि (homeland) से सम्बन्धित किया जाता है। मातृभूमि निश्चित अथवा गत्यात्मक हो सकती है परन्तु यह अपने निवासियों को एक विशिष्ट अस्मिता प्रदान करती है साथ ही विशिष्ट जीवन प्रणाली एवं व्यवहार के रूपों को विशिष्ट बना देती है। भूमि के साथ सम्बन्ध आदिवासियों की सम्बद्धता का वह मुख्य बिन्दु है जो कानून व संविधान के साथ उन्हें जोड़ता है। यह सम्बद्धता कृषक एवं गैर कृषक दोनों समुदायों के जीवन का अभिन्न भाग है। इन समुदायों ने न्यायालय में अपने भूमि अधिकारों हेतु संघर्ष कर ऐसी जीतें प्राप्त की हैं जो महत्वपूर्ण हैं।

आदिवासी समुदायों की बहुमत जनसंख्या चूँकि जंगलों में निवास करती है अतः मातृभूमि का सवाल केवल भूमि तक सीमित नहीं है। यह पक्ष तो समूचे जंगल क्षेत्र से जुड़ जाता है। परिणामस्वरूप इन समुदायों की चिन्ता केवल जीवनयापन या आवास तक सीमित नहीं होती अपितु परिस्थितिकी, पर्यावरण, संरक्षण, पुनःसृजन एवं ज्ञान व्यवस्था भी इस चिन्ता का हिस्सा होती है। वास्तव में ये सभी पक्ष जंगल के राजनीतिक अर्थवाद का भाग है। आदिवासियों का चूँकि वन जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है अतः वन्य पशु जीवन सुरक्षा एवं वन संरक्षण अधिकारियों एवं समूहों का वे सदैव आसानी से निशाना बनते हैं।

वनक्षेत्र में उनके (आदिवासियों) के जीवनस्थल उन संघर्षों को जन्म देते हैं जो शासन, स्वायत्तता एवं आत्म निर्णय के सवालों से सम्बद्ध हैं साथ ही ये संघर्ष वन अधिकारों से भी सम्बद्ध हैं। ये संघर्ष नव्य उदारवादी विकासात्मक राज्य द्वारा स्वीकारी गयी संप्रभुता को चुनौती देते हैं। हालांकि ये संघर्ष स्वायत्ता की रक्षा हेतु हैं जो उनके द्वारा (आदिवासी) व्यक्त नारों 'मावा नाटी, मावाराज' (हमारी जमीन, हमारा राज) से स्पष्ट होती है। स्वायत्तता का यह पक्ष भारतीय संविधान की अनुसूची पाँच एवं छहः का भी हिस्सा है, जो आदिवासियों की मातृभूमि की सुरक्षा की गारन्टी देता है साथ ही उनकी भाषा, उपकरण एवं कार्य नीति के संरक्षण की गारन्टी भी देता है जो एका–धिकारवादी, उपेक्षावादी एवं हिंसक सम्प्रभुता के विरूद्ध है क्योंकि इस प्रकार की संम्प्रभुता संवैधानिक अधिकारों को आदिवासियों तक पहुँचने से रोकती है।

आदिवासियों को यह भी अहसास धीरे धीरे होने लगा है कि सर्वोच्च न्यायालय में एक शक्तिशाली लॉबी उनके विरूद्ध कार्यरत है जो उनसे शारीरिक एवं सामाजिक दूरी को एक सीमा तक हर हालत में बनाये रखती है। इसके बावजूद ये आदिवासी अपने उन अधिकारों की प्राप्ति एवं रक्षा हेतु प्रयासरत हैं जो उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी विरासत के रूप में प्राप्त हैं। इस प्रयास के बावजूद लोकप्रिय दृष्टिकोण, जो विद्यमान है, के अन्तर्गत आदिवासियों की नकारात्मक छवि बनायी गयी है उन्हें 'सरल' एवं 'कम दक्ष या कुशल' कह कर प्रस्तुत किया जाता है।

सन् 1996 का अनुसूचित क्षेत्र का पंचायत विस्तार अधिनियम (PESA) एवं सन् 2006 का अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परम्परागत जंगल निवासी (जंगल अधिकार की मान्यता) अधिनियम (वन अधिकार अधिनियम/FRA) को इस प्रकार निर्मित किया गया है कि राजनीतिक स्वायत्तता एवं शासन का नियमन हो सके। इन अधिनियमों के कारण समूचे देश में विद्यमान आदिवासी क्षेत्रों में गहन संघर्ष एवं आदिवासी अधिकारों से सम्बन्धित आदिवासियों के मध्य पनपा विमर्श प्रभावी तरीके से उभरकर आया है। यदि हम इस पक्ष को महत्व दें तो कह सकते हैं कि इन अधिनियमों से जुड़ी बहसों ने रूपान्तरण मूलक संविधान वाद के विचार को बहस के केन्द्र में लोकप्रिय बना दिया है।

यदि आदिवासियों को गैर–भेदभावमूलकता के अधिकार को अपने जीवन का अंग बनाना है, जो कि उन्हें भारत के संविधान ने प्रदान किया है, तो

> **"...विकास और न्याय के मध्य नजदीकी सम्बन्धों को बढ़ावा देने के लिये संविधानवाद का प्रयोग उत्पादक है।..."**

स्वतन्त्रता के अधिकार को उन्हें कार्यशैली में सम्मिलित करना होगा। इस हेतु उन्हें आन्तरिक औपनिवेशीकरण से स्वयं को मुक्त करना होगा। यह समूचा अधिकार आदिवासियों को सन् 1950 में भारतीय संविधान के अस्तित्व में आने के साथ प्राप्त हो चुका है। इस पृष्ठभूमि के साथ आवश्यक है कि PESA एवं FRA को संवैधानिक नैतिकता के अन्तर्गत स्थापित किया जाय। जन अधिकार एवं संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण के विचारों के प्रभावी समर्थक अम्बेडकर का मत था कि लोकतान्त्रिक संविधान के क्रियान्वयन हेतु आवश्यक है कि प्रशासन का ऐसा स्वरूप हो जो कि संविधान के स्वरूप के अनुरूप हो और ठीक उसी शैली में वह क्रियान्वित हो।

हम अब प्रश्नों को पुनः प्रस्तुत कर सकते हैं : भेदभाव किस प्रकार से न्याय की अवधारणा से प्रेरित हुए विकास प्रारूप में से बहिष्करण (Exclusion) को जन्म देता है? भेदभाव के बहुस्तरीय संदर्भ एवं दमन के बहुलता मूलक ढाँचों की हमें व्यापकता से व्याख्या करनी होगी और इसे विकास के विचार की रचना करते हुए समझना होगा। भेदभाव के विशिष्ट रूपों में विस्तार एवं इसकी अनेक रूपों में अभिव्यक्ति साथ ही भेदभाव का स्वतः ही गहराते जाना वे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिनके कारण विकास का विचार वैसा नहीं हो सकता जो कि पूर्व में विद्यमान था। विकास का विचार एक प्रति–संवैधानिक दृष्टिकोण लिए हुए नहीं हो सकता। इस विचार को तो संविधानवाद के दायरे एवं संविधानवाद के उपकरणों के बीच में से गुजरते हुए स्वरूप ग्रहण करना होगा। हालांकि न्याय का क्षेत्र अब भिन्न भिन्न तरीकों के रूप में उभर कर आया है पर अब यह उपयोगी होगा कि विकास एवं न्याय के गहरे सम्बन्धों को और विकसित करने के लिए संविधानवाद को व्यापकता से प्रयुक्त किया जाय। न्याय के रूप में विकास के विचार में संविधानवाद के कौन कौन से पक्ष अपरिहार्य हैं? को जानना आवश्यक है। यदि हम यह स्वीकारें कि एक जीवन्त एवं न्यायोचित समाज की स्थापना तभी सम्भव है जब बिना किसी पूर्वाग्रह के बाहुल्यता एवं विविधता की आदर्शात्मक उपस्थिति हो। विकास के मूल में भी यही विचार अनिवार्यतः स्थापित हो। तब यह भी विचारना अनिवार्य होगा कि इन पक्षों की स्थापना हेतु संविधानवाद क्या मत प्रस्तुत करता है।

संवैधानिक उपागम विकास के उस रूप को बनाता है जिसमें न्याय एवं स्वतन्त्रता भौगोलिक एवं सामाजिक दृष्टि से अनिवार्यतः स्थापित हो। इसके साथ ही ये स्थापनाएं लोकतान्त्रिक राज्य की कार्यशैली का अवयव बनें। लोकतान्त्रिक राज्य का दायित्व हो कि वह वस्तुओं के वितरण एवं दक्षताओं के विस्तार में आने वाली प्रत्येक बाधा को दूर करे। यही विचार एवं क्रियातन्त्र संवैधानिक नैतिकता की धरोहर है। ये उत्तरदायित्व किसी भी सरकार के द्वारा सहजता एवं स्वेच्छा से वहन नहीं किये जाते। पर यह निर्विवाद है कि ये राज्य के अनिवार्य दायित्व हैं जो कि सरकारों को अनुशासित करते हैं। यह सब तभी सम्भव है जब जन स्वतन्त्रता/नागरिकीय स्वतन्त्रता एवं आदिवासी अधिकारों से सम्बद्ध आन्दोलनों के दबाव में लगातार वृद्धि हो। ■

> इतिहास का कोना

राष्ट्रीय समितियाँ एवं शोध कमेटियाँ

जैनीफर प्लॉट, आई.एस.ए. के प्रकाशन अनुभाग की उपाध्यक्ष

राष्ट्रीय समितियाँ आई एस ए की सामूहिक सदस्य हैं एवं शोध कमेटियाँ इसकी आन्तरिक संरचना का महत्वपूर्ण भाग हैं परन्तु इनकी कार्यप्रणालियाँ एवं भूमिकायें समय के साथ बदली हैं। 1949 में जब यूनेस्को के तत्वावधान में आई एस ए का गठन हुआ तो राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व के संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रारूप को प्रयुक्त किया गया। उस समय राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय समीतियों की संख्या कुछ ही थी। तीव्र गति से परिवर्तन शुरू हुआ और विभिन्न देशों को प्रोत्साहित किया गया कि वे समीतियों का गठन करें परिणामस्वरूप 1959 तक 35 समीतियों ने आई एस ए की सदस्यता ले ली। आई एस ए की अधिशासी काउन्सिल विभिन्न सदस्य देशों के प्रतिनिधियों से गठित होती है और ये प्रतिनिधि सदस्य आपसे में मिल कर कार्यकारिणी (EC) का गठनन करते हैं। तत्पश्चात् शोध उप समिति (RC) गठित होती है। यह शोध उप समिति सामाजिक स्तरीकरण एवं गतिशीलता के क्षेत्र में कार्यरत है। 1950 के दशक के अन्त तक शोध उपसमिति ने विभिन्न क्षेत्रों जैसे परिवार इत्यादि में अनुसंधान करने प्रारम्भ किये जिन्हें प्रतीकात्मक रूप में इस शोध उपसमिति की उपसमीतियाँ कहा गया। प्रत्येक उपसमिति एक लघु क्रियाशील समूह था जिसमें सदस्यों को आमन्त्रित किया गया साथ ही एक देश से दो सदस्यों को अधिकतम स्थान दिया गया। समय के साथ साथ ये RCs अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक सक्रिय हुई और इनकी भूमिकायें प्रमुख बनती चली गयी। 1970 में एक महत्वपूर्ण संवैधानिक परिवर्तन किया गया। RCs को व्यापक किया गया एवं व्यक्तिगत सदस्यता प्रारम्भ की गयी जबकि कार्यकारिणी सदस्यों को भी केवल अधिशासी काउन्सिल से चुनने का प्रचलन भी बदल गया। अनुसंधान काउन्सिल का गठन हुआ जिसने चार कार्यकारिणी सदस्यों का चुनाव किया और ये सदस्य 11 राष्ट्रीय प्रतिनिधियों का हिस्सा बने। RCs को जितना खुला रखा गया उतना ही वे विस्तार लेती गयीं। कुछ सदस्य अपने अपने क्षेत्रों से सम्बन्धित अनुसंधान में, वर्तमान में, कम रूचि लेते हैं या लेते रहे अतः संयुक्त RC अनुसंधान कम व्यावहारिक होते गये। धीरे धीरे RCs शासकीय संदर्भों को अधिक महत्व देने लगीं। 1994 में वर्तमान संरचना को प्रारम्भ किया गया अब RCs एवं राष्ट्रीय समीतियाँ अपनी बैठक काउन्सिल की तरह करती हैं। आधे पदों के लिए मताधिकार को प्रयुक्त करती हैं जिनसे EC की रचना होती है।

RCs अनुसंधान के लिए उपाध्यक्ष का चुनाव करती हैं पर इस प्रक्रिया के कारण कुछ राष्ट्रीय प्रतिनिधि अपनी सीमित भूमिका के कारण असन्तुष्ट हो गये। सन् 2002 में यह सहमति बनी कि राष्ट्रीय समीतियों के लिए एक उपाध्यक्ष का पद सृजित किया जाय। इस पद पर पहला निर्वाचन सुजाता पटेल का हुआ। इस प्रयास के कारण राष्ट्रीय समीतियाँ एक बार फिर सक्रिय हुईं। दो उपाध्यक्षों ने अब इस व्यवस्था को प्रारम्भ किया है कि विश्व सम्मेलन (वर्ल्ड कांग्रेस) के मध्य आवश्यक बैठक आयोजित हो और एक कांफ्रेस का आयोजन किया जाय। इन दोनों गतिविधियों के कारण आई एस ए में सहभागिता न केवल प्रभावी हुई है अपितु उसका विस्तार भी हुआ है। बौद्धिक जीवन के विभिन्न स्वरूपों के साथ अधिशासन की संरचना के साथ भी इन कारणों से जुड़ाव हुआ है। इस भागेदारी मूल संरचना के कारण नवीन बौद्धिक ऊर्जा की हाल के वर्षों में सामूहिक प्रकाशनों के रूप में अभिव्यक्ति हुई है। ■

> राबर्ट के. मर्टन का सम्मान

नादिया एश्यूलोवा, सेण्टर फार द सोशियोलोजी ऑफ साइंस एण्ड साइंस स्टडीज, सेण्ट पीटर्सबर्ग शाखा, रशियन एकेडमी ऑफ साइंसेज, बोर्ड सदस्य RC 23; एवं जैमे जिमेनेज, यूनिवर्सिडाड नैसियोनाल आटोनोमा ड मैक्सिको, आई. एस. ए. कार्यकारिणी सदस्य

जुलाई 2010 में राबर्ट मर्टन का 100वां जन्म दिन धूमधाम से मनाया गया। वे 20वीं शताब्दी के सर्वाधिक चर्चित समाजशास्त्रियों में से एक थे। यह अवसर केवल इस तथ्य का द्योतक नहीं था कि हम राबर्ट मर्टन को याद करें अपितु इस तथ्य पर भी प्रकाश डालना था कि समाजशास्त्र की एक शाखा विज्ञान का समाजशास्त्र की उत्पत्ति एवं उसकी मान्यता को स्थापित करने में मर्टन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 1966 में मर्टन ने जोसफ बेन–डेविड के साथ विज्ञान (एवं प्रौद्योगिकी) का समाजशास्त्र के नाम से आई एस ए की शोध समिति 23 को स्थापित किया तथा सन् 1974 तक वे उसके अध्यक्ष रहे। आई एस ए की कार्यकारिणी के वे 1970–71 में एसोसिएट सदस्य के रूप में सक्रिय रहे। मर्टन का जन्म सन् 1910 में फिलेडेलफिया में हुआ था। इनके माता पिता उक्रेन से आये प्रवासी थे। मर्टन का नाम समाज शास्त्र में अनेक शोधों से जुड़ा है पर मुख्य रूप में वे 'विज्ञान का समाजशास्त्र' से सम्बद्ध थे। वैज्ञानिक समुदाय ने 'विज्ञान का मर्टनवादी समाजशास्त्र' के विचार को व्यापक रूप में स्वीकारा। 1997 में अमेरिका के सर्वाधिक प्रतिष्ठित पुरस्कार (विज्ञान के क्षेत्र में) नेशनल मैडल ऑफ साइंस को प्राप्त करने वाले वे प्रथम समाजशास्त्री थे। वृहद सिद्धान्त अथवा अमूर्त आनुभवकितावाद के स्थान पर 'मध्यवर्ती सिद्धान्त' का विचार प्रस्तुत कर मर्टन के द्वारा उन अवधारणाओं पर बल दिया जिनका सम्बन्ध दिन प्रतिदिन के जीवन से है। मर्टन ने 'सेल्फ फुल फिलिंग प्रोफेसी' की अवधारणा को जन्म दिया तथा 'भूमिका प्रारूप' (रोल मॉडल) के विचार को प्रस्तुत किया। मर्टन ने अपने सहयोगियों के साथ केन्द्रित साक्षात्कार (फोकस्ड इन्टरव्यूह) का विचार भी दिया, जिसे बाद में 'केन्द्रित समूह' (Focus Group) के रूप में उभारा गया। यह मर्टन के मूल विचार को तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत करने की कोशिश थी। 1942 में मर्टन ने विज्ञान के सारतत्व (Ethos of Science) की चर्चा कर समाज वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी तरफ आकृष्ट किया। साथ ही यह भी बताया कि किस प्रकार संस्थागत संरचना के अन्तर्गत विज्ञान के मूल्य वैज्ञानिकों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। मर्टन के योगदान को शिक्षा जगत के परे भी समझने की आवश्यकता है। मर्टन के 'सफलता के साथ एकीकृत समुदायों' सम्बन्धी अध्ययन ने अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय में लाये गये एक कानूनी वाद 'ब्राउन बनाम बोर्ड ऑफ एज्यूकेशन' को समझने में महत्वपूर्ण योगदान किया। इस अध्ययन के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय ने पब्लिक विद्यालयों के अमेरिका में हो रहे विखण्डन को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। सम्भवतया मर्टन अपने अध्ययन 'सोशियोलोजी आफ साइंस : थ्योरिटिकल एण्ड इम्पीरिकल इन्वेस्टिगेशन' के कारण सर्वाधिक जाने जाते हैं। इसके साथ ही मर्टन ने 'मैथ्यू प्रभाव' की अवधारणा को जन्म दिया जो इस प्रघटना को संदर्भ देता है कि धनी व्यक्ति क्यों और अधिक धनी और गरीब व्यक्ति और अधिक गरीब क्यों हो रहे हैं? इसका अभिप्राय है कि मर्टन लाभों एवं अवसरों के संकेन्द्रण की चर्चा कर रहे थे। बाईबल से उत्पत्तित यह अवधारणा स्पष्ट करती है कि विज्ञान में एक ऐसी सामाजिक प्रघटना है जिसके द्वारा शक्ति एवं आर्थिक–सामाजिक पूंजी उन्हीं के पास ज्यादा संकेन्द्रित होती है जिनके पास वह पूर्व में भी थी। अधिक शक्ति अथवा अधिक पूंजी को प्राप्त करने के लिए ऐसे व्यक्ति अपने संसाधनों को भी प्रयुक्त करते हैं। रशियन एकेडमी ऑफ साइंसेज, सैंट पीटर्सबर्ग शाखा एवं RC 23 ने संयुक्त रूप से मिलकर मर्टन की जन्म शताब्दी के सम्मान में एक पुस्तक का प्रकाशन किया है। ■

राबर्ट मर्टन
1910-2003.

सन् 2003 में वर्ल्ड सोश्यल फोरम के सम्मुख पानी के निजीकरण के विरुद्ध प्रदर्शन

> जल अन्याय से मुकाबला

जो एस्टेबन कास्त्रो, न्यूकैसल विश्वविद्यालय (यू.के.), आई एस ए कार्यक्रम कमेटी

80 के दशक में संयुक्त राष्ट्र ने 'जल दशक' के अन्तर्गत् यह लक्ष्य निर्धारित किया कि 1990 तक इस पृथ्वी पर रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को 40 लीटर प्रतिदिन स्वच्छ पेय जल उपलब्ध हो।[1] यह कहने की आवश्यकता नहीं कि हम उस लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सके हैं। 1990 में विश्व जनसंख्या का लगभग 17 प्रतिशत एक लीटर सुरक्षित जल भी प्राप्त नहीं कर पाया जबकि 40 प्रतिशत जनसंख्या मूलभूत प्रकृति की सफाई सुविधा (सेनिटेशन) भी प्राप्त नहीं कर सकी। तत्पश्चात् संयुक्त राष्ट्र ने सन् 2000 में सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों (Millennium Development Goals -MDGs) को निर्धारित किया। ये लक्ष्य 'जल दशक' में निर्धारित किये गये लक्ष्यों की तुलना में न केवल संकुचित प्रकृति के हैं अपितु प्रतिगामी भी है। यह नकारात्मकता सम्भवतया 1990 के दशक में स्वतन्त्र बाजार प्रणाली को दिये गये संरक्षण का परिणाम है।

सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों में भी जल उपलब्धता की आवश्यकता एवं मल निकासी की सुविधा के पक्ष सम्मिलित हैं। इन लक्ष्यों में कहा गया है कि विश्व में जितनी जनसंख्या को ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं के आधे भाग को सन् 2015 तक ये सुविधाएं उपलब्ध करा दी जाएं।

हालांकि कुछ विशेषज्ञों का दावा है कि उपरोक्त नये लक्ष्य ज्यादा यथार्थपरक हैं जबकि 1980 के दशक में निर्धारित हुए लक्ष्य तुलनात्मक रूप से इतने यथार्थपरक नहीं थे। व्यवहार में इसका अर्थ हुआ कि यह स्वीकारा जाय कि लाखों मनुष्यों को उन बीमारियों से ग्रसित होना पड़ेगा और मृत्यु का शिकार होना पड़ेगा जिन्हें रोका जा सकता है। यह भविष्य साफ साफ देखा जा सकता है। वास्तव में संयुक्त राष्ट्र संघ के वे अंग जो कि MDGs की प्रगति का आंकलन कर रहे हैं यह मत व्यक्त कर रहे हैं कि विश्व के निर्धनतम क्षेत्रों में स्थिति और अधिक बिगड़ेगी। अधिकांश देश स्वच्छ जल सम्बन्धी लक्ष्य को तो प्राप्त कर सकते हैं पर अनेक देश मल निकासी की सुविधाएं प्रदान करने में असमर्थ रहेंगे। स्थिति उस समय और अधिक भयावह होगी जब जल एवं मल निकासी के सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य पर्यावरणीय मुद्दों से जुड़ेंगे क्योंकि इन सुविधाओं का अभाव पर्यावरणीय ह्रास को उत्पन्न

>>

करता है। जिस जनसंख्या के पास ये सुविधाएं नहीं है उनसे स्वच्छ जल की उपलब्धता वापस ली जा सकती है या कम की जा सकती है। साथ ही अनुपयोगी जल के बहाव में तीव्र वृद्धि होगी। यदि हम यह आंकड़े स्वीकारें कि विश्व के दक्षिणी हिस्से में अनुपयोगी जल के केवल 5 प्रतिशत भाग का 'ट्रीटमेण्ट' ही उसे पर्यावरण के पुनः सम्पर्क में आने के पूर्व किसी न किसी रूप में मिल पाता है, जिसका कि कारण इस प्रक्रिया पर अत्यधिक राशि का व्यय होना है, तो यह स्पष्ट है कि MDGs की प्राप्ति हेतु एक बड़ी राशि अर्थात् आर्थिक एवं वित्तीय सहायता एवं संसाधनों की सहायता की ही आवश्यकता नहीं है अपितु इसके लिए दूरगामी एवं प्रतिबद्धता मूलक आचारशास्त्रीय एवं राजनीतिक समझ की भी जरूरत है।

> सार्वजनिक वस्तुओं का तिजारतीकरण (कमोडीफिकेशन) एवं सामाजिक संघर्ष :

इस मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के संदर्भ में यदि विचार किया जाय तो एक उदाहरण को तथ्य के रूप में लें। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयासों में यह भी एक प्रयास है कि कुछ लीटर स्वच्छ पानी की प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्धता को मानवाधिकार घोषित किया जाय। पर इस प्रयास का अनेक देशों नें बहुत मजबूती से विरोध किया विशेषतः उत्तरी विश्व के धनी देशों नें इसका विरोध किया। हालांकि सन् 2010 में संयुक्त राष्ट्र संघ अन्ततः बहुमत से जल की उपलब्धता को मानवाधिकार घोषित कर सका। अधिकांश देश जो इसका विरोध कर रहे थे मतदान के समय अनुपस्थित रहे। इस संदर्भ में यह जानना जरूरी है कि 1980 के दशक से ही जल की उपलब्धता एवं मल निकासी प्रबन्धन से सम्बन्धित मुख्य जन नीतियाँ/सरकार/राज्य की नीतियाँ विश्व भर में निजीकरण का रूप ले रही हैं। पानी को बाजार में विक्रय/तिजारत की वस्तु बनाना, पानी से सम्बद्ध सेवाओं का राज्यों के द्वारा समर्थित निजीकरण हुआ है, जिसने आधारभूत सेवाएं सार्वजनिक वस्तु या संसाधन हैं के विचार को हाशिये पर ला दिया है। हालांकि पानी के निजीकरण की सीधी नीति अनेक देशों में असफल हुई है उसके बावजूद जन असहमति, निजी समुदायों की असहमति, नागरिकीय समाजों के विरोध की परवाह किये बिना तिजारितीकरण की प्रक्रिया अबाध रूप से जारी है। सेवा प्रदान करने वालों की अस्मिता की उपेक्षा भी इसमें सम्मिलित है। सार्वजनिक प्रतिष्ठानों से अपेक्षा की जाने लगी है कि वे निजी व्यावसायिक घरानों की तरह कार्य करें अर्थात् सामाजिक दायित्व (अर्थात् यह मूल्यांकन किये बिना कि व्यक्ति में भुगतान करने की क्षमता है अथवा नहीं, सभी को सार्वजनिक सुविधायें/सेवायें उपलब्ध करायी जायें) के स्थान पर आर्थिक दक्षता (जिसका अर्थ लाभ प्राप्त करना है) को महत्व दिया जाए। साथ ही अनेक सार्वजनिक अर्थात् राज्य संचालित प्रतिष्ठानों में निजी–सार्वजनिक साझेदारी को प्रवेश दिया गया है जो परोक्ष रूप से एवं एक भिन्न नामावली के साथ निजीकरण ही है, जिसके माध्यम से निवेश हेतु धन का संग्रह करना उद्देश्य है। इस पक्ष के साथ और भी अनेक समस्याओं के, जैसे भ्रष्टाचार को संरक्षण देने की समस्या, अकुशलता, जबाबदेही का अभाव आदि, उल्लेख सार्वजनिक सेवा प्रतिष्ठानों के विषय में किये जाते हैं। केवल गरीब देशों में ऐसा हो, आवश्यक नहीं है पर इन समस्याओं ने सामाजिक एवं राजनीतिक तनावों व संघर्षों को बढ़ाया है।

पानी की अनिवार्य उपलब्धता एवं जल/मल निकासी सेवा की उपलब्धता स्पष्ट रूप से वे अवयव हैं जो किसी भी सभ्य समाज की अनिवार्यता हैं। सभ्य एवं शिष्ट जीवन की निरन्तरता इन अवयवों के बिना सम्भव नहीं है। मानव जाति के एक बड़े हिस्से के पास ये सुविधाएं आज भी उपलब्ध नहीं है। ये अनुपलब्धताएं उस व्यापक संरचनात्मक स्थितियों का हिस्सा हैं जहाँ असमानता एवं अन्याय विद्यमान है। असमानता एवं अन्याय की इन स्थितियों को मनुष्य एवं जल अथवा व्यापक परिप्रेक्ष्य में मनुष्य एवं प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य के सम्बन्धों के अन्तर्गत् समझना जरूरी है। पानी के विषय के परे जाकर इस व्यापक परिप्रेक्ष्य की संक्षिप्त विवेचना भी इस आलेख में नहीं की जा सकती क्योंकि यह परिप्रेक्ष्य बहुआयामी चरित्र का है। खुली खानों (open cost mining) का अनियन्त्रित विस्तार जो कि 1990 के दशक से इस पृथ्वी के विभिन्न क्षेत्रों में उभरा है को इस परिप्रेक्ष्य में सम्मिलित किया जा सकता है। यह विस्तार उन क्षेत्रों में भी तीव्र गति से हुआ है जहाँ खनन प्रक्रिया आंशिक रूप में ही विद्यमान थी। लातिन अमेरिका इसका उदाहरण है। वर्तमान में मेक्सिको से लेकर पेटोगोनिया तक खुले क्षेत्र में खनन (ओपन कास्ट माइनिंग) की निरन्तरता नें ग्लेशियर्स एवं जंगलों को समाप्त करने में योगदान किया है, जल एवं मिट्टी में गन्दगी तथा सायनाइड को बढ़ाया है तथा इसमें पारा (मर्करी) एवं अन्य घातक तत्वों की मात्रा बढ़ी है। मानव जनसंख्या का विस्थापन हो रहा है और धीरे धीरे उनके जीवन में जहर घुल रहा है। विस्थापन का चरित्र भी कमोवेश दबावमूलक है। इसके साथ साथ मौन रूप में या परोक्ष रूप में सामाजिक संघर्ष भी धरातल पर उभर रहे हैं। विश्व के पैमाने पर बढ़ रहा वि–वन्यीकरण तथा साथ ही हाइड्रो–भूगर्भीय व्यवस्थाओं पर प्रभाव, मानव समुदाय एवं सामान्य स्तर पर पनपे वैश्विक जलवायु प्रारूप, जल सम्बन्धी आधार सुविधाओं का बढ़े पैमाने पर निर्माण जैसे बाँध, नदियों के बहाव में बदलाव के तन्त्र, हाइड्रोवेज, व्यावसायिक क्रियाओं के लिए प्राकृतिक जल स्त्रोतों, जल से सम्बद्ध पारि–स्थितिकीय प्रणालियों जैसे दलदली जमीन/उर्वरक जमीन, झील इत्यादि के विध्वंस के विरूद्ध सामाजिक संघर्ष अथवा जन प्रतिरोध इन संघर्षों के उदाहरण हैं।

> जल असमानता एवं जल अन्याय के विरूद्ध प्रतिरोध

समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य के अनुसार वैज्ञानिक ज्ञान में रूपान्तरण की सम्भावनाओं से जुड़ी प्रक्रियाओं के दोहरे चरित्र हैं: प्रथम ये प्रक्रियाएं अध्ययन की बौद्धिक वस्तुएं हैं और इस रूप में ये महत्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं पर यह ज्ञान जो बौद्धिक प्रयासों से उभर रहा है के अनेक व्यावहारिक, भौतिक एवं मूलभूतीय राजनीतिक परिणाम अस्तित्व में आते हैं। भले ही ये परिणाम स्वीकृत/मान्य हों अथवा न हों। लेटिन अमेरिका एवं कैरेबियन में जल असमानता एवं जल अन्याय के मुद्दों पर अन्तः अनुशासनात्मक एवं निश्चित अनुशासन (विषय) से परे सन्दर्भों (इन्टर डिसिप्लिनिरी एवं ट्रान्स–डिसिप्लिनरी) के अन्तर्गत शोध प्रयास प्रकाश में आये हैं। ये शोध अध्ययन एक शोध नेटवर्क WATERLAT (वाटरलाट) (www.waterlat.org) द्वारा संचालित किये गये हैं। इस नेटवर्क का शोध उपागम तीन अनुमानों/दृष्टिकोण पर मुख्य रूप से आधारित है :

(1) जल संचालन एवं प्रबन्धन का पूंजीवादी चरित्र : यह अनुमान/विचार/दृष्टिकोण इस केन्द्रीय तत्व पर आधारित है कि जल संचालन एवं जल प्रबन्धन के विषय समूचे विश्व में (संरचना एवं क्रिया दोनों ही संदर्भों में) पूंजी संकेन्द्रण की प्रक्रिया से संचालित हैं। संकेन्द्रण प्रक्रिया की यह शक्तिशाली गतिकी के अन्तर्गत् पर्यावरण संरक्षण एवं इसकी निरन्तरता को दीर्घकालिक रूप देने की आवश्यकता की असफलता, असमानता, अन्याय जैसे सभी पक्ष अधीनस्थ हो जाते हैं।

(2) जल के सवाल को लेकर सुरक्षाहीनता[2] के सामाजिक अवयवः विश्व में जिस प्रकार जल संचालन एवं जल प्रबन्धन के प्रयास हो रहे हैं, के कारण मानव जाति को अनेक खतरों एवं अवरोधों का सामना करना पड़ रहा हैं। ये खतरे एवं अवरोध अनेक कारणों से उभर कर आये हैं जैसे स्वच्छ जल एवं आवश्यक जल सेवाओं की अनुपलब्धता अथवा कम उपलब्धता एवं जल सेवाओं पर प्रभाव इत्यादि। अत्यन्त विकसित एवं संवेदनशील वैज्ञानिक–प्रौद्योगिकीय ज्ञान प्रणाली व दूर गामी प्रकृति की दक्षता एवं सम्बन्धित हस्तक्षेप इत्यादि की उपस्थिति के बावजूद मानव सभ्यता के सम्मुख ये खतरे एवं अवरोध बहुत बड़ी चुनौतियाँ हैं। WATERLAT इस तर्क पर बल देता है कि मनुष्य पर इन खतरों के पड़ने वाले प्रभावों एवं उनसे उत्पन्न समस्याओं का ही अध्ययन पर्याप्त नहीं है अपितु उन सामाजिक अवयवों को भी जानना जरूरी है जो आवश्यक रूप से इन चुनौतियों एवं खतरों के प्रति सुरक्षा हीनता की स्थितियों को मानव जाति के सम्मुख उपस्थित कर रहे हैं।

(3) सुरक्षाहीनता की इस स्थिति को चुनौती देने अथवा इसका सामना करने हेतु आवश्यक है कि जल उपभोग का पर्याप्त लोकतान्त्रीकरण हो तथा इस उपयोग की प्रणाली के प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का लोकतान्त्रीकरण हो। इसके साथ ही जल के उत्पादन एवं इसकी उपलब्धता सम्बन्धी ज्ञान की

>>

जानकारी हो। WATERLAT इस हेतु विषय की सीमाओं के परे उपागम (ट्रान्सडिसिप्लिनरी) को अध्ययन हेतु प्रयुक्त करता है। इस हेतु जरूरी है कि विभिन्न शिक्षाविदों, सामाजिक कार्यकर्ताओं जो कि जल सम्बन्धी क्रियाओं/मुद्दों के लोकतान्त्रीकरण हेतु संघर्षरत हैं, एवं अन्य सम्बन्धित इकाइयों को एक प्लेटफार्म पर लाकर अध्ययन प्रक्रिया संचालित हो। इन सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं सामाजिक इकाइयों में नीति निर्धारक एवं नीति क्रियान्वन सम्बन्धी अधिकारी, जल प्रबन्धक, सामाजिक आन्दोलनकर्ता, श्रमिक संगठन, पर्यावरणीय समीतियाँ, देशज समुदाय एवं अन्य लोग सम्मिलित होते हैं।

WATERLAT (वाटरलाट) ने सन् 2010 में साओ पाउलो, ब्राजील में अपनी वार्षिक बैठक का आयोजन किया। इस दौरान तीन दिन की एक अन्तर्राष्ट्रीय कांफ्रेस 'सामाजिक एवं पर्यावरणीय न्याय के मध्य तनाव : जल प्रबन्धन एक विषय' जैसे विषय पर आयोजित हुई। इस कांफ्रेस में अर्जेन्टीना, बोल्विया, ब्राजील, कनाडा, चिली, कोलम्बिया, कोस्टारिका, अक्वाडोर, हेइटी, इटली, मैक्सिको, निकारागुआ, पेरू, स्पेन, स्वीडन, ब्रिटेन, उरूग्वे एवं वेनेजुएला से लगभग 300 प्रतिभागियों ने सहभागिता की। 100 से अधिक शोध आलेखों से रचित एक इलेक्ट्रानिक पुस्तक (अधिकांशतः ये लेख स्पेनिश एवं पुर्तगाली भाषा में हैं) की भी इस अवसर पर प्रस्तुति की गयी। यह पुस्तक http;//www.waterlat.org/publications.html वेबसाइट पर उपलब्ध है। इसके साथ ही सभी क्रियाओं को समन्वित कर उन्हें डीवीडी के रूप में उपलब्ध कराया गया। उद्घाटन भाषण, मुख्य भाषणों, सहभागियों के साक्षात्कारों इत्यादि की विडियों रिकॉर्डिंग भी करायी गयी जिसे प्राप्त करने का अनुरोध Waterlat@ncl.ac.uk नाम की email पर किया जा सकता है।

इस नेट वर्क की अगली बैठक 24 से 26 अक्टूबर 2011 के मध्य मैक्सिकों नगर में होगी। इस बैठक को लेटिन अमेरिकन फेकल्टी ऑफ सोश्यल साइंसेज (FLACSO Mexico) के निमन्त्रण पर आयोजित किया जा रहा है – जो इस नेटवर्क के साझीदार भी हैं। यह बैठक 'लेटिन अमेरिका के मुद्दे को समर्पित है। मुख्य भाषण/उद्घाटन सत्र, कांफ्रेस, राउण्ट टेबिल्स, कार्यशाला एवं जन सभाएं इस दौरान आयोजित की जाऐंगी। पहले दिन 'जल असमानता, अन्याय एवं सुरक्षाहीनता के विभिन्न स्वरूपों' विषय पर चर्चा होगी जबकि दूसरे दिन 'असमानता, अन्याय एवं सुरक्षाहीनता के विषयों को जल–जन स्वास्थ्य इंटरफेस' के अन्तर्गत् विचार केन्द्रित होंगे। आखिर में तीसरे दिन 'जल असमानता, अन्याय एवं सुरक्षाहीनता का सामना : विषय सम्बन्धी चुनौतियाँ'' विषय पर विमर्श होगा। बैठक की विस्तृत एवं नवीनतम जानकारियों को http;// waterlat.org/Academic Events.html वेबसाईट पर प्राप्त किया जा सकता है।

[1] कुछ अनुमानों के अनुसार मुलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु 40 लीटर सुरक्षित जल की प्रति व्यक्ति हेतु उपलब्धता न्यूनतम आवश्यकता है।

[2] सर्वाधिक प्रभावित होने वाली स्थिति (Vulnerability) का अभिप्राय उस स्थिति से है जिसके अन्तर्गत् वस्तु को बहुत आसानी से तोड़ा और तबाह किया जा सकता है, जिसे आसानी से घायल कर सकते हैं अथवा जिस पर आक्रमण किया जा सकता है। 'सुरक्षाहीनता' में सामाजिक समस्या के अनेक आयामों को सम्मिलित करते हैं। यह मानव जाति की वह विशेषता है जिसके अन्तर्गत वह अपना बचाव करने में असमर्थ है। इस विशेषता के कारण वह हाशियें पर आ जाती है या समाप्त हो जाती है।

> युवा समाजशास्त्री, युवा परिप्रेक्ष्य

एना विदु, बार्सिलोना विश्वविद्यालय

केटेलोनिया के युवा समाजशास्त्री

'समाजशास्त्र में हमारी भूमिका अपरिहार्य है... सच तो यह है कि हम जो 300 युवा समाजशास्त्री आज यहां हैं वे इस विद्या के भविष्य की कुंजी हैं।' कनिष्ठ समाजशास्त्र परिषद के अध्यक्ष – एक मास्टर्स डिग्री के विद्यार्थी और कनिष्ठ शोधकर्ता – ने इन शब्दों के साथ चौथी केटेलान कांग्रेस ऑफ यंग सोशियोलाजिस्ट्स जो कि बार्सेलोना मे अप्रेल 29–30, 2011 के दौरान हुई की शुरुआत की। मेड्रिड, ग्रेनाडा, मलागा और वेलेन्सिया और केटेलोनिया के भी विद्यार्थियों (बी.ए., एम.ए. तथा पीएच.डी.) ने भी पहली बार भाग लिया। लगभग 90 पर्चे पहचान, नस्लवाद, बेरोजगारी, प्रजातन्त्र, यौन व्यवहार, और परिस्थिति विज्ञान जैसे विषयों पर पढ़े गये जो कि हमारे साथियों और साथ ही व्याख्याताओं को भी समाजशास्त्र के प्रति हमारी वचनबद्धता को दर्शाते हैं। सम्मेलन की शुरुआत हाँगकाँग की पॉलीटेक्नीक यूनिवर्सिटी की डॉ0 पुन नगाई के भाषण से हुई। उन्होंने बताया कि किस प्रकार युवा चीनी समाजशास्त्रियों की सहभागिता श्रम शोषण के अनुसंधान एवम् निन्दा व निराकरण में रही। अधिक प्रजातान्त्रिक समाज में समाजशास्त्र के योगदान के तरीकों को स्पष्ट करते समय अपने श्रोताओं से वह एक सामान्य सहमति प्राप्त कर रही थीं। उन्होनें कनिष्ठ समाजशास्त्रियों के वैश्विक समाजशास्त्र के तंत्र की रचना करने के लिए हमें प्रेरित किया।

समाजशास्त्र के भविष्य पर आयोजित एक गोलमेज सम्मेलन में हमने चर्चा की कि किस प्रकार समाजशास्त्र एक लोक सेवा बन सकता है। जो कुछ हम पहले से ही जानते हैं उसका विश्लेषण रोकने की आवश्यकता है, हमें कम जन रुचि के विषयों पर आधारित प्रकाशनों को रोकने की आवश्यकता है, एवं इसके बजाय समाज की आवश्यकताओं पर ध्यान देना चाहिए। हमने समाजशास्त्र के व्यवसायीकरण पर भी सत्र किये तथा व्यवहारिक तथा शैक्षणिक शोध के ज्ञान और अनुभवों को भी बांटा। व्यवसाय में हमारे भविष्य पर हमारी चर्चा और अन्य संगठनों जैसे कि केटेलान सोसाइटी ऑफ प्रोफेशनल सोशियोलोजिस्ट्स एवं पॉलिटोलोजिस्ट्स से संभावित सहयोग को भी स्थान मिला।

कांग्रेस, युवा समाजशास्त्रियों के एक ऐसे तंत्र को संगठित करने जा रही है जो समाजशास्त्र की वैज्ञानिक संयमितताओं के विकास के लिए प्रतिबद्ध हो और साथ ही उसमें सामाजिक प्रतिबद्धता भी हो। कनिष्ठ समाजशास्त्र परिषद (जूनियर सोशियोलोजी एसोसिएशन) अपनी एक वेबसाईट बनाएगा तथा साथ ही अपनी उपस्थिति फेसबुक एवं ट्विटर पर भी दर्शाएगा। अन्त में पर आखिरी नहीं, कांग्रेस की दावत दूसरी प्रमुख घटना थी जहां हमने चर्चाएं कीं, परियोजनाऐं बनाईं, दोस्त बनाए और नृत्य भी किया।

> स्पेनिश क्रांति में समाजशास्त्र

टेरेसा सोर्ड, ऑटोनोमस यूनिवर्सिटी ऑफ बार्सिलोना तथा तातियाना सान्तोज, यूनिवर्सिटी ऑफ गिरोना

केटेलूनिया चौक, बार्सिलोना – पुनः लोगों के कब्जे में

वाशिंगटन पोस्ट ने हमारे 15 मई से प्रारम्भ हुए आंदोलन को 'स्पेनिश क्रांति' की संज्ञा दी है। यह आंदोलन स्पेन से सूदूर जापान तक जा पहुंचा है। आम नागरिकों ने सार्वजनिक स्थानाओं को सामूहिक बहस, विवाद और विचार के लिए अधिग्रहित कर लिया है। इन स्थानों पर वे, आवास, स्वास्थ्य सेवाओं, शिक्षा और समाज के अन्य क्षेत्रों को किस प्रकार से पुनर्गठित करना चाहते हैं, पर चर्चा करते हैं। लोग अपने विशेष प्रस्तावाओं को लोकतंत्र के वार्तालाप वाले स्वरूप के माध्यम से नागरिक समाज के अन्तर्गत होने वाली चर्चाओं के द्वारा विकसित करते हैं। यह चर्चा शक्ति और नीति निर्धारण की औपचारिक संस्थाओं से बहुत दूर होती है। सर्वाधिक प्रसारित विचारों में से एक नियम है: ''कोई हमारा प्रतिनिधित्व नहीं करता।'' अतः 15 मई के आंदोनल ने एक विशिष्ट पहचान विकसित की है जो सभाओं के माध्यम से नागरिक समाज के संयुक्त संगठन पर आधारित है। फलस्वरूप सार्वजनिक स्थान विभिन्न संस्कृतियों, आयु, शैक्षणिक स्तर के लोगों के लिए समान रूप से खुलते हैं और सभी को अपने विचारों को व्यक्त करने का पूरा अवसर मिलता है।

बार्सिलोना का 'प्लाका केयेलूनिया' (केटेलूनिया चौक), इस आंदोलन का सबसे सशक्त प्रांगण (Agoras) 'अगोरा', एक ऐसा ही स्थान है। इस चौक के स्थायी शिविर के अन्तर्गत होने वाली दैनिक महासभा इस आंदोलन का केन्द्र है। यह महासभा आंदोलन की आवश्यकता व जरूरतों पर आधारित आयोग से समर्थन पाती है। चौक में आने वाला कोई भी व्यक्ति किसी भी आयोग से जुड़ सकता है। हर आयोग का अपना एक स्थान है जहाँ फेसिलिटेटर्स (facilitators) चौबीसों घंटे बैठकों का संयोजन करते हैं। यदि कभी मतभेद होता है तो उस मुद्दे पर आगामी बैठक में चर्चा होती है। यदि किसी मुद्दे पर महासभा में मतभेद होता है तो वह उसी आयोग में लौटाया जाता है जहाँ से वह आया था। मतभेद व्यक्त करने वाले लोगों को अपने विचार प्रस्तुत करने के लिए बैठकों में आमंत्रित किया जाता है। एक विशिष्ट दल, जो कि पारियों में कार्य करता

>>

कैटेलूनिया चौक, बार्सिलोना – महासभा का सत्र

है, सभाओं के लिए विचारणीय विषयों को तैयार करता है।

यह 'वास्तविक लोकतंत्र' सामाजिक नेटवर्कों, ज्यादातर फेसबुक, ट्वीटर, ब्लॉग, वेब और ऑनलाइन फोरम के माध्यम से प्रोत्साहित व प्रसारित होता है। सभी आयोगों/कमीशनों का कार्यवृत्त विवरण एवं सभी महत्वपूर्ण विषय जिन पर महासभा में मतदान किया जाने वाला है बैठक के चौबीस घंटे पूर्व ही वेब पेज पर प्रकाशित कर दिया जाता है। आनलाइन फोरम में चौक में होने वाली चर्चाओं/परिचर्चा के सामानंतर चर्चाएँ होती हैं। लोग स्वयं ही आंदोलन के समक्ष आने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दों का चयन करते हैं। इस बात का उदाहरण, सर्वोच्च न्यायालय और संवैधानिक न्यायालय द्वारा शिविर को हटाने के हक में दिये गये निर्णय के बावजूद लोगों को संगठित करने का निर्णय चालू रखना है।

15 मई के आंदोलन में कई समाजशास्त्री भाग ले रहे हैं। हम यहाँ पर नागरिकों को उनके कार्य या उन्हें क्या करना चाहिए की वास्तविक व्याख्या देने के लिए नहीं हैं। इस बात को आंदोलन ने भी स्वीकारा है। परन्तु हम यहाँ बातचीत में योगदान दिये बगैर सिर्फ भागेदारी के लिए भी नहीं हैं। चौक के अन्तर्गत नागरिक हमसे हमारे समाजशास्त्रीय ज्ञान को चर्चाओं में लाने की अपेक्षा करते हैं। हम यहाँ लोकतंत्र में संवाद की प्रक्रिया को विकसित करना चाहते हैं। इस प्रकार सार्वजनिक समाजशास्त्र के प्रयोग द्वारा सामाजिक विज्ञानों का महत्व सभी एकत्रित एवं अन्य लोगों पर प्रमाणित होगा।

कई समाजशास्त्रीय सहजता के विरोधियों ने कहा कि किसी को भी इस आंदोलन का पूर्वानुमान नहीं था। यह सत्य नहीं है। हमें 12 अप्रेल को प्रत्यक्ष लोकतंत्र एवं इन्टरनेट पर जारी अपीलों के माध्यम से, नीचे से आंदोलन को प्रारम्भ करने का आमंत्रण मिला। समाजशास्त्र के हमारे एक प्रोफेसर ने आर्थिक और राजनैतिक हालातों की गंभीरता पर जोर दिया। उत्तर अफ्रीका में हो रहे आंदोलनों के उदाहरण के द्वारा उन्होंने यह बताने का प्रयास किया कि कैसे भिन्न स्थानाओं में और भिन्न परिस्थितियों से मुखातिब लोग समान आंदोलन का स्वप्न देख रहे हैं। इन्होंने इस क्रांति की तारीख, 26 अप्रेल से 31 मई के बीच, निश्चित की थी। उस दिन से हमने इस आंदोलन को बढ़ावा देने के लिए विचारों को संगठित करने व उन्हें प्रसारित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

अतः समाजशास्त्रियों ने अपनी भविष्य–वाणी एवं विषयगत ज्ञान के आधार पर 'अगोरा' के विमर्श में योगदान दिया है परन्तु ऐसा नहीं है कि स्पेनिश क्रांति ही हमारे समाजशास्त्र से लाभान्वित हुई है, अपितु इसने भी समाजशास्त्रीय ज्ञान को समृद्ध बनाने में योगदान दिया है ताकि हम संवाद धनी लोकतंत्र (dialogic democracy) की संभावनाओं की परिस्थितियों को बेहतर समझ सकें। ■

> वैश्विक श्रम: दक्षिण अफ्रीकी परिप्रेक्ष्य से

एडवर्ड वैबस्टर, विट्वाटरस्टेण्ड विश्वविद्यालय, दक्षिण अफ्रीका

अंग्रेज इतिहासविद् ई.एच. कार ने कहा था कि आप क्या देखते हो, यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप पर्वत के किस तरफ खड़े हो। मैं, दक्षिण अफ्रीका के दक्षिणी छोर, सोने के शहर, जोहान्सबर्ग में खड़ा हूँ। जोहान्सबर्ग का निर्माण उन्नीसवीं सदी के अंत में, वैश्वीकरण के पहले चरण– प्रथम वृहद रूपान्तरण, के दौरान हुआ।

इस संक्षिप्त व्याख्यान में मैं तीन बातें करूँगा –

1. दक्षिणी परिप्रेक्ष्य से वैश्विक श्रम को समझने के लिए आवश्यक सामाजिक संदर्भ उपलब्ध कराना;
2. वैश्विक नवीनीकरण का श्रमिकों पर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा करने वाले अपने कार्य की चर्चा;
3. वैश्विक दक्षिण में किस प्रकार प्रति–आन्दोलन (काउण्टर मूवमेण्ट) निर्मित किया जा सकता है, इसको समझने के लिए अलग तरीके का सुझाव देना।

> सामाजिक संदर्भ

श्रमिक एकता का विचार अर्थात् यह विचार कि शक्तिशाली कमजोर की मदद करें, का उद्भव औद्योगिक पूंजीवाद की शुरूआत से है। यह कार्ल मार्क्स के सुविख्यात नारे, ''दुनिया के श्रमिकों एक हो जाओ'' में प्रेषित है।

दक्षिण अफ्रीका में श्रमिक एकता की इस आवाज ने एक विशिष्ट रूप ले लिया जब 1922 की साधारण हड़ताल में श्वेत श्रमिक ''विश्व के श्रमिकों श्वेत दक्षिण अफ्रीका के लिये एकजुट हो जाओ'' के नारे पर लामबंद हो गये।

वे प्रारंभिक क्रांतिकारी समाजवादी जो यूरोप से श्रमिक अंतर्राष्ट्रीयकरण का विचार लाये थे, अपने साथी श्वेत श्रमिक – उपनिवेशी (कोलोनाइजरस) – को इस बात पर सहमत करने में असफल रहे कि उनका भविष्य अश्वेत श्रमिक – उपनिवेशित – के साथ ही है। श्वेत श्रमिकों ने अपने मत के बचाव में कहा कि सस्ता अश्वेत श्रम उनकी श्रम शक्ति को नुकसान पहुँचा रहा है।

श्रमिक वर्ग का यह खण्डीय विभाजन श्रमिक एकता के निर्माण में केन्द्रीय चुनौती है। यहाँ या फिर विश्व के किसी भी कोने में, सर्वहारा की स्थिति में सजातीयता नहीं है। ठीक वैसे ही जैसे उन्नीसवीं सदी के अन्त में विश्व के कई हिस्सों में आज भी निम्नस्तरीय कार्य, बिना कार्य से अच्छा है।

लेकिन, यह एक कहानी है जिसे बताना पड़ेगा कि अश्वेत श्रमिकों ने समय के साथ श्रमिक संघ बनाने और उनकी सदस्यता प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त कर लिया। दुराग्रही मालिक, प्रतिकूल एवं क्रूर रंगभेदी राज्य से मुकाबला करते हुए अपने संघ के लिए मान्यता प्राप्त करने का संघर्ष बेहद लंबा व दुखदायी था।

उनकी जीत का एक मुख्य कारक अंतर्राष्ट्रीय एकता थी। दक्षिण अफ्रीका का बहिष्कार और वित्तीय प्रतिबंध लगाने के अभियान ने रंगभेदी सरकार को नेल्सन मण्डेला के नेतृत्व वाली अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस के साथ समझौता करवाने में अहम् भूमिका निभाई। सेन फ्रांसिस्कों में गोदी कामगारों द्वारा दक्षिण अफ्रीकी जहाजों से माल उतारने के लिए मना करने का निर्णय अंतर्राष्ट्रीय एकता के कई उदाहरणों में से एक है।

अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस की 1994 में हुई विजय एक संकट–पूर्ण विजय थी क्योंकि यह विजय ऐसी दुनिया में हुई जहाँ शक्ति निर्णयात्मक ढंग से राजधानी की तरफ स्थानान्तरित हुई। दक्षिण अफ्रीका दोहरा परिवर्तन अनुभव कर रहा था। एक तरफ तो लोकतंत्र की तरफ परिवर्तन था जहां युद्धरत श्रमिक आंदोलन ने कई महत्व–पूर्ण अधिकारी जीत लिए थे और दूसरी तरफ इसने वैश्विक अर्थव्यवस्था में भी प्रवेश कर लिया, जहाँ अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा मालिकों पर लागत कम करने और चीन की कीमत पर उत्पादन करने पर दबाब डाल रही थी।

> वैश्विक पुन: संरचना के प्रभाव

वैश्विक पुनःसंरचना की प्रक्रिया, जो लोकतंत्र की विजय के साथ प्रारम्भ हुई थी, ने श्रम बाजार को पुनःसंगठित किया जिससे असुरक्षित श्रम शक्ति में वृद्धि हुई। इसी विचार की हमने अपनी किताब ग्राउण्डिंग ग्लोबलाइजेशन में जाँच की है। हमने श्वेत सामान जैसे फ्रिज, वाशिंग मशीन के उत्पादन के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि तीन भिन्न देशों के तीन कारखाओं में अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा किस प्रकार श्रमिकों में असुरक्षा फैला रही है।

– इलेक्ट्रोलक्स, आस्टेलिया में हमें श्रम कटौती के समक्ष, कल्याण ाकारी राज्य के पोषित सब्र का माहौल मिला।
– दक्षिण कोरिया में LG के श्रमिकों ने अधिक मेहनत से कार्य कर प्रतिस्पर्धा को उत्तर दिया।
– दक्षिण अफ्रीका में श्रमिक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में जीवित रहने हेतु विभिन्न युक्तियों के पालन के लिए घरों में पलायन कर गये।

हमने अपने अध्ययन को पोलन्यी (Polanyi) के 'दुहरी गति' (double movement) के विचार पर आधारित किया है। हमने यह सुझाव दिया है कि इस नव उदारवादी वैश्वीकरण के चरण को हम द्वितीय वृहद/रूपांतरण के रूप में देख सकते हैं। हमें समाज को अनियंत्रित बाजार से बचाने के कई छोटे प्रयोग और प्रस्ताव मिलें पर सामान्य तौर पर वैश्विक पुनः संरचना के लिए उनकी प्रतिक्रिया स्थानीकृत ही थी। वैश्विक नवीनीकरण को चुनौती देने वाला एकमात्र प्रयास ओरेंज (Orange) ऑस्ट्रेलिया में स्थित इलेक्ट्रोलक्स (Electrolux) में कार्यरत श्रमिकों का था जिन्होंने अपने संघर्ष को वैश्विकृत करने का प्रयास किया। इंटरनेट के माध्यम से उन्होंने मिशिगन, यू. एस. ए. के एक छोटे से शहर ग्रीनविले और स्वीडन में इलेक्ट्रोलक्स के गृह के श्रमिकों से संपर्क स्थापित किया। परन्तु उत्पादन में श्रमिक से श्रमिक की एकता बनाने का यह प्रयास सफल नहीं हुआ। स्वीडिश संघ का नेतृत्व प्रबंधन के बहुत अंतरग था अतः वे कम्पनी के चीन में पुनःस्थापित होने के लाभ को नहीं देख पाये। लेकिन 'सफल असफलताएँ' ही

>>

हमें संघर्ष के अगले चरण का आधार प्रदान करती हैं। हम सब को मोण्टगोमेरी बस बहिष्कार स्मरण है लेकिन एल्डन मोरिस के अनुसार, इस बहिष्कार के पहले कई अन्य असफल और अस्मरणीय बहिष्कार हो चुके हैं।

> पारदेशीय एकता का आशय क्या है?

तीन विभिन्न प्रकार की एकता में अंतर करने के लिए पारदेशीय एकता के बारे में सोचना लाभदायक है। एकता के पहले प्रकार को मैं मानवतावादी कहूँगा। ये मानव अधिकार के दुरूपयोग के पीड़ित – जैसा कि नस्लवाद पीड़ित, बाल श्रम या श्रमिक समूह द्वारा अपने संगठन को मान्यता दिलवाने का संघर्ष; के रक्षा में एकात्मकता के कार्य हैं। ये अधिकतर नैतिक दावों से प्रेरित हैं। ये अपेक्षित रूप से शक्तिशाली हो सकते हैं जैसा सफल रंगभेदी आंदोलन ने दर्शाया है। इस प्रकार की एकात्मकता उपभोक्ता बहिष्कार या फिर श्रमिक अधिकारों के प्रति रियो टिन्टो के विरूद्ध अभियान का रूप ले सकती है।

दूसरे प्रकार की पारदेशीय एकता को मैं उत्पादन प्रक्रिया (production approach) कहूँगा। यहाँ श्रमिकों के मध्य एकता कारखाने से कारखाने पर आधारित है। जैसा कि ऑस्ट्रेलिया के प्रकरण से विदित है कि उन्हें संगठित करने के कृत्य अत्यन्त मुश्किल हैं। उत्पादन के अंतर्राष्ट्रीयकरण ने देशों के मध्य प्रतिस्पर्धा का तर्क निर्मित कर दिया है। यदि जी. एम. (GM) के श्रमिक हड़ताल पर जाते हैं तो अन्य कार उत्पादकों की बिक्री अच्छी होगी। लेकिन इस सब बाधाओं के बाद भी उत्पादन में पारदेशीय एकता में समन्वय की वृद्धि पाई जाती है। फोक्सवैगन के दुनिया भर के श्रमिक जर्मनी, ब्राजील, भारत एवं दक्षिण अफ्रीका की VW कारखानों के पार प्रतिवर्ष अपनी माँगों के समन्वय हेतु एकत्रित होते हैं। सामूहिक वैश्विक सौदेबाजी करने में नाविक विश्व में सर्वप्रथम है। अंतर्राष्ट्रीय यातायात श्रमिक फैडरेशन के निरीक्षक उनके जहाजों का बंदरगाह पहुँचने पर निरीक्षण करते हैं। इस प्रकार वे इतिहास में पहली बार किसी भी क्षेत्र में वैश्विक न्यूनतम मजदूरी के लिए सहमति बना पाते हैं और उसे विश्व के नाविकों पर लागू कर पाते हैं।

इस प्रकार के नये पारदेशीय संगठन बीसवीं शताब्दी के पारंपरिक राष्ट्र आधारित संघो को चुनौती देते हैं। अंतर्राष्ट्रीय एकता के एक पुराने प्रारूप के अनुसार, ऐसी कड़ियाँ विशिष्ट अंतर्राष्ट्रीय विभागों के माध्यम से आयोजित होती थी और अमूमन श्रम संगठन के नेताओं के बीच पाई जाती थी। तात्कालिक ईमेल एवं स्काइप के माध्यम से एवं प्रत्यक्ष संचार ने इन सब को बदल दिया है। ये नई प्रकार की पारदेशीय क्रियाएँ विकेन्द्रित हैं और उपर से नीचे के साथ–साथ नीचे से ऊपर की ओर भी जाती हैं।

तीसरी प्रकार की एकता को मैं नियामक पद्धति कहूँगा। यह पद्धति उत्पादन में संलग्न श्रमिकों को एकजुट करने का प्रयास नहीं करती बल्कि यह वैश्विक अधिकार के लचीले कानून की समान व्यवस्था को निर्मित करने का प्रयास करती है।

इसका उद्देश्य बाजार को बदलने की बजाय नियंत्रित करना है। पीटर इवान्स के अनुसार, बाजार को समाज के सेवक के रूप में न कि मालिक के रूप में स्थापित करना है।

वैश्विक दक्षिण में लागू होने वाला एक नवाचार है ग्लोबल सोशल फ्लोर का विचार जिसमें सभी को पेंशन का अधिकार, स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, संतान अनुदान एवं न्यूनतम आय चाहे नौकरी की गारण्टी से या प्रत्यक्ष नकद अनुदान से प्राप्त हो। यह ब्राजील, भारत और दक्षिण अफ्रीका के जैसे देशों की सामाजिक नीति में होने वाले समकालीन नवाचार हैं।

ये नई नीतियाँ एक प्रति–आन्दोलन (counter-movement) की भ्रूण अवस्था में हैं परन्तु यह प्रति–आन्दोलन उपर से है – भारत में नरेगा (NREGA) के माध्यम से राज्य प्रत्येक घर को एक वर्ष में न्यूनतम 100 दिन का कार्य उपलब्ध कराने की गारण्टी देता है। यह प्रत्येक परिवार को जॉब कार्ड होने पर कार्य का अधिकार देता है। कुछ लोग इसे सुधारवाद व को–आप्टेशन की पद्धति के रूप में खारिज कर सकते हैं परन्तु यह सही नहीं है। यह लगातार विस्तृत होते सामाजिक संरक्षणवाद की व्यवस्था की सीढ़ी के पहले कदम हो सकते हैं।

मुद्दे की बात है कि वैश्वीकरण एक बाधित करने वाला ही नहीं बल्कि सीमाओं के पार संगठन बनाने का एक अवसर भी है, वैश्वीकरण ने अधिकार आधारित सम्भाषण को गति प्रदान की है। यह नीचे से आंदोलनों को जन्म दे रहा है जैसा हमने हाल ही के कुछ महीनों में उत्तर अफ्रीका में देखा है।

ए स्ट्रीटनेट इन्टरनेशनल जैसा पारदेशीय नेटवर्क सर्वाधिक नवीन संगठन के रूप में उभरा है। डरबन में स्थित, स्ट्रीटनेट इंटरनेशनल सड़क पर माल बेचने वालों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एकजूट कर स्थानीय नगरपालिकाओं पर उनके सार्वजनिक स्थानों पर व्यापार करने के अधिकार को मानने पर दबाब डालता है।

यहाँ चुनाव वैश्विक होने या स्थानीय रहने का नहीं है बल्कि स्थानीय और वैश्विक के बीच में निपुणता पूर्वक संचालन करने का है। स्थानीय व वैश्विक के इस सम्मिश्रण ने, जिसे सिडनी टेरो ''रूटेड़ कास्मोपोलिटक्स'' कहता है को उभारा है।

उत्पादन को वैश्विक मूल्य श्रंखला से जोड़कर, कम्पनियाँ शक्ति के नये स्त्रोतों के प्रति असुरक्षित हो गई हैं। कोरिया में बनने वाले इंजन के किसी भाग की आस्ट्रेलिया की एक असेम्बली लाइन को पहुँचाने में देरी ऑस्ट्रेलिया और कोरिया दोनों को सौदेबाजी करने पर विवश कर सकती है। 1930 में डेट्रायट में हेनरी फोर्ड द्वारा सामना की गई चुनौती से यह भिन्न नहीं है। वैश्वीकरण के इस युग में शक्ति के नये स्त्रोत और स्वरूप पैदा हो गये हैं।

यदि इन क्रियाओं को काउण्टर हेजिमोनिक वैश्वीकरण कहना समय से पूर्व होगा, फिर भी इन्होंने हमारी शोध सूची को हिला दिया है। इन्होंने हमें एक तरफ वैश्विक पूंजी और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं व दूसरी तरफ वैश्विक श्रम और सामाजिक गतिशीलता के बीच सम्बन्धों पर पुनः सोचने की चुनौती दी है। यदि इस उभरती शोध सूची को वैश्विक काउण्टर मूवमेण्ट के निर्माण में योगदान देना है तो इसमें बहु–स्तरीय विश्लेषण की आवश्यकता पड़ेगी। ■

बीजिंग के निर्माण श्रमिक अपनी शयनशाला में

> वैश्विक श्रम
एक चीनी परिप्रेक्ष्य

पुन नगाई, हाँगकाँग पोलिटेक्निक विश्वविद्यालय

वैश्विक मापकों पर पूँजीवाद के विस्तृत पुनरुत्पादन की गति में वृद्धि ने चीन और शेष विश्व में त्वरित गति से वर्ग सम्बन्धों को फिर से बनाने में अपना योगदान दिया है। एडवर्ड वैबस्टर (वैश्विक संवाद के इस अंक में) एक नयी प्रकार की अंतरराष्ट्रीय एकता की सम्भावना की बात करते हैं जो कि विश्व के श्रम आन्दोलन का पोषण कर सकती है। मैं उनके स्वप्न से सहमत हूँ तथा मैं चीन के स्थानीय संघर्ष को वैश्विक परिप्रेक्ष्य से सम्बधित करना चाहूंगी। हम सब जानते हैं कि उन्नत तकनीक और सूचनाओं से पूँजी के बहाव को प्रचारित गतिशीलता मिलती है और नए श्रम की अन्तर–राष्ट्रीयता वर्तमान वर्ग सम्बन्धों को लगातार छिन्न–भिन्न कर रही है। तथापि पश्चिमी शैक्षणिक 'कामगार वर्ग की विदाई' या 'वर्ग विश्लेषण' नें वर्ग सम्बन्धों को अप्रचलित नहीं कर दिया है। इसके बजाय पूँजी की उड़ान के साथ तृतिय विश्व समाज जिसमें कि चीन संघर्ष के अग्रिम मोर्चे पर रहा, में वर्ग और वर्ग संघर्ष के मामले आये।

> चीन में एक नए कामगार वर्ग का जन्म

पिछले 30 वर्षों में सुधारवादी राज्य और वैश्विक पूँजी ने मिलकर चीन को 'विश्व की कार्यशाला' में बदल दिया और कुछ सौ लाखों का एक नया कामगार वर्ग बनाया। अतंरराष्ट्रीय श्रम आन्दोलन के साथ मित्रता–पूर्ण सम्बन्धों के लिए बिना किसी आशावाद के हमें फिर भी इस वैश्विक भयावह अनुभव का मुकाबला करने के लिए असफल नहीं होने वाली भावना को बनाए रखना होगा। यदि चीन अब वैश्विक पूँजी के अकल्पनीय गति और मात्रा में संग्रहण का एक स्वप्न है तो मैं नए कामगार वर्ग के लिए उसी समय में एक वैश्विक भयावह स्थिति को बनाने के लिए तर्क करुंगी। अभी तो उनके संघर्ष की शुरुआत मात्र है।

हाल ही के वर्षों में 'विश्व की कार्यशाला' शब्द का प्रयोग सामान्यत चीन की वैश्विक उत्पादन क्षमता को दर्शाने के लिए किया जाता रहा है। जब वैश्विक पूँजी चीन में पुनर्स्थापित की जाती है तो यह न केवल सस्ता श्रम और सस्ती जमीन की कीमतें देखती है, यह परिश्रमी, कुशल और प्रशिक्षित चीन के आंतरिक प्रवासी कामगारों को भी देखती है जो घटिया परिस्थितियों में भी काम करने के लिए तैयार हैं, जो कि सही समय पर उत्पादन के योग्य है, और जो कि वैश्विक उत्पादों के संभवित उपभोक्ता भी हैं। चीन को विश्व की कार्यशाला के रुप में पुनर्स्थापित किया गया इसलिए यह चीन के नये कामगार वर्ग के पोषण की आधारशिला बनी।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि 'पैंदे तक की दौड़' के खेल में पूरे विश्व के श्रमिकों को एक दूसरे के सामने धकेला गया है कि कौन सबसे कम मजदूरी और परिलाभ स्वीकर करेगा, और सबसे अधिक तंगहाली में जीने और काम करने की परिस्थितियों में रहेगा। इस खेल में लगता है कि चीन दुनियाँ के कामगारों के लिए अति श्रम मूलक निर्यात औद्योगिकरण के द्वारा जमीन तलाश कर रहा है। एस.ए.सी.ओ.एम. (Students and Scholars against Corporate Misbehaviour) – एक अंतरराष्ट्रीय संस्था, जिसका उद्धेश्य विद्यार्थियों और श्रम संघर्षों के मध्य सम्बन्ध बनाना है – ने अंतरराष्ट्रीय संघों में पिछले एक दशक से अधिक चीनी श्रमिकों के अधिकारों के प्रति विस्तृत दुर्व्यवहारों को लेखाबद्ध किया है। बकाया मजदूरियां, मजबूरन और अत्यधिक अतिरिक्त समय, अरुचिकर स्वास्थ्य और सुरक्षात्मक परिस्थितियां उद्धरणीय अंश हैं। उत्तर–समाजवादी (पोस्ट–सोशियलिस्ट) चीनी राज्य के द्वारा पता नहीं क्यों वैश्विक पूँजीवादी बाजार की ताकतों को संगठन की स्वतन्त्रता और हड़ताल के अधिकार पर प्रतिबन्धों में छूट देकर आसान बनाया है।

> चीन में प्रवासी कामगारों का श्रम सक्रियतावाद

नया चीनी कामगार वर्ग अभी परिवर्तन और पुर्नसंरचना के दौर से गुजर रहा है। सुधारवादी दौर में चीन वर्ग विभेदीकरण, वर्ग संघर्ष तथा वर्ग ध्रुवीकरण देख चुका है। अपनी शिकायतों को आवाज देने के लिए किसी प्रकार के संस्थागत माध्यम के अभाव के कारण अधीनस्थ वर्ग ने अब दमन का विरोध करने और अपने असंतोष प्रदर्शन के लिए समूह में विरोध प्रदर्शन करना शुरु कर दिया है। अधिकारिक आंकड़े बतलाते हैं

>>

कि 1993 और 2003 के बीच राष्ट्रीय स्तर पर सामूहिक प्रदर्शनों की संख्या में लगभग 10,000 से 87,000 की बढ़ोतरी हुई है – लगभग 20 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि। इसी के साथ इन प्रदर्शनों मे भाग लेने वालों की संख्या भी 7,30,000 से 30,00,000 से ज्यादा बढ़ी है, और यह बात ध्यान देने की है कि इन प्रदर्शनों में से 75 प्रतिशत प्रदर्शन कामगार और खेतिहर लोगों द्वारा शुरु किए गये थे। ये प्रदर्शन न केवल संख्या में बढ़े हैं बल्कि औसत आकार, सामाजिक क्षेत्र एवंम् संगठन के स्तर पर भी इनमें बढ़ोतरी हुई है।

चीन में वर्ग सम्बन्धों के बढ़ते हुए ध्रुवीकरण ने वर्तमान में तेजी से बढ़ते हुए वर्ग संघर्ष और प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होने वाले श्रम सक्रियतावाद से अपने आप को व्यक्त किया। सामूहिक संघर्ष जैसे कि पेन्शन की मांग पर प्रदर्शन, भुगतान नहीं किये जाने पर श्रमिकों द्वारा सड़कों का रोका जाना, और अवैधानिक क्षतिपूर्ती के विरोध में सामूहिक वैधानिक कार्यवाहियां अब कोई असाधारण खबर नहीं है। प्रदर्शन चाहे वे निजी, विदेशी अथवा राज्य के उपक्रमों में हों अब ज्यादा आमने–सामने होने लगे हैं, और यहां तक कि कई बार तो प्रदर्शनकारी सरकारी भवनों पर हमला भी कर देते हैं जिसका अन्त पुलिस से हिंसात्मक झगड़े से होता है। इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि प्रवासी श्रमिक अपने अधिकारों की रक्षा करने में पहले से अधिक सक्रिय हो गये हैं और वे कई प्रकार की गतिविधियों का संचालन करते हैं जिनमें निजी एवं सामूहिक, सीधी और वैधानिक कार्यवाहियां शामिल हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रवासी श्रमिकों द्वारा सामूहिक कार्यवाहियां स्थापित संस्थागत या वैधानिक माध्यमों के प्रयोग उनके हितों की रक्षार्थ प्रतिबन्धित नहीं हैं। वे अपनी हड़तालों, सड़क पर कार्यवाही और प्रदर्शनों के द्वारा सुधारवाद की प्रक्रिया से भी गुजर रहे हैं। यद्यपि एक संगठित वर्ग–शक्ति के विकास पर प्रतिबन्ध है, फिर भी कारखाने के स्तर पर हड़तालें, काम रोकने, मजदूरी के लिए सामूहिक मोलभाव, सामूहिक शिकायतों का प्रक्षेपण, उद्देश्यपरक कार्यवाहियां जो उन्हे मीडिया में दिखाते हों या राजकीय सामान पर हमले आदि वे सामान्य माध्यम हैं जिन्हें प्रवासी श्रमिक अपने असंतोष प्रदर्शन और परिवर्तन की मांग के लिए अपनाते हैं।

> श्रम संघर्ष के सामने चुनौतियाँ

प्रत्यक्षतः कुछ ढांचागत रुकावटें हैं जो कि इस नये चीनी कामगार वर्ग के संघर्ष को बलपूर्वक रोकती हैं। मैंनें एक बार यह तर्क दिया था कि नया कामगार वर्ग अब एक कभी खत्म नहीं होनें वाले (आधे–)सर्वहारा वर्ग में बदल गया है, लेकिन नई पीढ़ी औद्योगीकृत कस्बों एवं शहरों में जहां वे काम करते हैं अब एक भयावह आध्यात्मिक रहस्योद्घाटन का अनुभव कर रही है।

श्रमिकों का विश्व इतिहास हमें बतलाता है कि कामगार वर्ग का निर्माण और परिपक्वता ग्रामीण श्रमिकों की दूसरी व तीसरी पीढ़ी में अपनी जड़ें जमाता है जो कि औद्योगिक शहरों में काम करने के लिए आते हैं। यह सर्वहारा वर्ग की प्रक्रिया है जो कि खेतीहर मजदूरों को उनके उत्पादन और निर्वाह के परंपरागत तरीकों से वंचित करके औद्योगिक मजदूरों में बदलती है, वास्तव में विश्व पूँजीवाद के इतिहास में यही मूल विषय चलता रहता है। परिणामस्वरुप, कामगारों का भाग्य पूँजी संग्रहण की प्रक्रिया और श्रम को जिन्स में बदलने की सीमा पर निर्भर होता है। इन मजदूरों का ना ही स्वामित्व होता है और ना ही उनके नियंन्त्रण में होते हैं वे औजार जिन्हें वे काम में लेते हैं, कच्चा माल जिसे वे तैयार करते हैं या उत्पादन जिसे वे बनाते हैं।

जब चीन नें अपने आप को विश्व की कार्यशाला में बदल डाला और आधुनिक औद्योगिक समाज बन गया तब विश्व पूँजीवाद के इतिहास मे एक सामान्य प्रघटना का पुनः अधिनियमन हुआ। चीन के बारे मे जो विशिष्ट था वह यहां की सर्वहारा बनने की अनूठी प्रक्रिया थी। चीन के साम्यवादी तत्रं को वैश्विक अर्थव्यवस्था में मिलाने के क्रम में चीनी अधिकारियों ने पंजीकरण की हुकाऊ व्यवस्था बनाई, जो कि दक्षिणी अफ्रीकन रंगभेद व्यवस्था के उपनियमों जैसी ही थी, जिसमें कहा गया कि ग्रामीण श्रमिक शहरों में काम करेंगें परन्तु शहरों मे ठहर नहीं सकेंगें। चीन के नए कामगार वर्ग के लिए औद्योगिकरण और शहरीकरण अभी तक दो असंबद्ध प्रक्रियाएं हैं, क्योंकि अधिकतर देहाती श्रमिक वहां रहने के अवसरों से वंचित किये जाते हैं जहां वे काम करते हैं अथवा जहां रहकर वे काम करते हैं। स्थानीय शहरी सरकारें श्रमिकों के सामूहिक उपभोग के लिए मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं और दूसरे सामाजिक प्रावधानों हेतु किसी भी प्रकार की शुरुआत नहीं करती हैं। ग्रामीण प्रवासी कामगार शहरी केन्द्रों पर रहने से कानूनी तौर पर बाधित किये गये थे ना कि वास्तव में, हुकाऊ व्यवस्था और वर्ग अवरोध यह सुनिश्चित करते है कि अत्यल्प मजदूरी के कारण प्रवासी मजदूर शहरी समुदायों में रहने योग्य रहें ही नहीं। कुल मिला कर चीनी देहाती श्रमिकों की सर्वहारा वर्ग बनने की प्रक्रिया को एक स्थानिक अलगाव की शक्ल दी गई थी जिसमें कि उत्पादन तो शहरी क्षेत्रों मे होता है और प्रजनन देहातों मे। क्षेत्रों के इस पृथकीकरण ने एक ऐसी श्रमिक शयनशाला व्यवस्था (dormitory labor regime) का उदय किया जो कि काम और घर के एक नये संयोजन को उपलब्ध कराती है और जो कि प्रारंभिक पूँजीवादी कार्यस्थल–एवं–निवास व्यवस्था से साम्य रखती है और फिर भी श्रमिकों को शहरों से लगातार अलग रखे हुए है।

परिणाम में एक खत्म नहीं होनें वाले सर्वहारीकरण की आकृति बनती है जो अपूर्ण बनने की भावना को और भी गहरी करती है जो कि नोन्गमिन्गोन्ग (औद्योगिक विश्व का एक 'अर्ध' या 'आधा' श्रमिक) है। वह व्यक्ति जो कि अपर्याप्तता के भाव से ग्रसित हो, घुमक्कड़ी के लिए मजबूर हो जाता है। शहरी और औद्योगिक विश्व के दरवाजे प्रवासी मजदूरों की दूसरी पीढ़ी के लिए बन्द हो जाते हैं। नोन्गमिन्गोन्ग को ना तो कहीं जाने को जगह है और ना ही कहीं ठहरने को जैसा कि इस कामगारों की कविता में बतलाया गया है: 'तुम कहो कि तुम्हारी जिन्दगी घुमक्कड़ी के लिए ही बनी है' और तुमने यह रास्ता कुछ नहीं बनने के लिए चुना है क्योकि न तो तुम नोग्मिन (देहाती) हो और ना ही गोंगरेन (कामगार) हो। इस बात से कभी दुखी नहीं होना, तब भी नहीं, जब कि तुम्हे भयानक तकलीफें झेलनी पड़ें। नई पीढ़ी के डेगोंग श्रमिकों का यह उद्देश्य वाक्य है जो कि अपूर्ण होने के अनुभव को भुला देने हेतु प्रयासरत है।

> निष्कर्ष

कुल मिलाकर, सुधारकालीन चीन में सर्वहारीकरण की प्रक्रिया नें एक ऐसे नये कामगार वर्ग को बनाया जो कि उत्तरोतर जागरुक है और सामूहिक कार्यवाही के विभिन्न रुपों में भागीदारी के लिए तैयार है। प्रवासी कामगारों की दूसरी पीढ़ी की घेराबन्दी ने दक्षिणि चीन में स्वाभाविक होने वाली हड़तालों को महामारी की तरह पोषित किया है।

देहाती कामगारों की दूसरी पीढी में हमने स्वाभिमान, गुस्सा एवम् सामूहिक कार्यवाही की भावना को देखा है और हमने यह भी पाया कि ये कामगार उन प्रदर्शन केन्द्रों से सीधे जुड़े हुए हैं जिनमें कि वे अपनी एजेंसी के द्वारा साफ तौर पर समझौता करते हैं। संरचनात्मक बाधाओं के बावजूद, नया कामगार वर्ग प्रतिदिन संगठित प्रकार का विद्रोह करता है जो कि पुंजीवादी ताकतों को खतरा उत्पन्न करता है तथा राज्य को उन्हे वश में रखने के लिए अधिक निश्चयी बनाता है। ■

> वैश्विक श्रम – मैक्सिको के परिप्रेक्ष्य से

एनरिक ड ला गार्जा, युनिर्वसिडाड ऑटोनामा मेट्रोपोलिटाना, मैक्सिको नगर

एडवर्ड वैबस्टर ने एक शास्त्रीय परन्तु सामयिक प्रश्न किया था: कि पूँजी के वैश्विकरण के साथ सामाजिक आन्दोलन के रुप में श्रम का वैश्विकरण भी सम्भव है, और इस सम्बन्ध में अन्य पहचानों और एकता के गठन का क्या महत्व है ?

यद्यपि वैबस्टर 'दक्षिण' पर ध्यान देता है, मुझे विश्वास है कि उसका विशलेषण पुराने विकास और अर्धविकसित द्विभाजन तक विस्तृत है, न केवल इसलिए कि आस्ट्रेलिया जैसे विकसित देश दक्षिण में हैं लेकिन इसलिए भी कि उत्तरी देशों मे भी दक्षिण के लक्षण पाए जाते हैं। अभी भी चर्चा का महत्वपूर्ण विषय है कि किस प्रकार कामगारों के विखंडन को रोका जाए, विखंडन जो कि मूलतः नैतिक, धार्मिक, राष्ट्रीयता और सबसे बढ़ कर विभिन्न प्रकार के व्यवसायों (औपचारिक बनाम अनौपचारिक, मजदूरी कमाने वाले बनाम नहीं कमाने वाले, वैश्विक श्रृंखला के कामगार बनाम लधु उपक्रमों के कामगार, मुख्य कामगार बनाम ठेके के कामगार आदि) के मतभेदों के चलते हो रहा है। इस अर्थ में वैबस्टर सही है कि कम्पनियों पर लागत कम करने और प्रतिस्पर्धात्मक नतीजों का भारी वैश्विक दबाव है जो कि मजदूरों में शक्तिहीनता और त्यागपत्र देने की प्रवृति को बढ़ाता है, तथा उन्हें जीवित रहने के लिए कम अधिकारों तथा कम सुरक्षा वाले काम स्वीकार करने के लिए मजबूर करता है। पहचान के विखंडन से भी इस रणनीति की परिणिति हो सकती है।

तथापि इतिहास से कुछ सबक सीखे जा सकते है:

1. पहचान के विखंडन की थीसिस, चाहे वह व्यवसायों की विविधता (क्लाज ऑफे) या फिर विविध श्रम परिपथ (जिगमट बाउमेन) की हो, अन्त में सतही ही हो सकती है क्योंकि व्यवसायों, कम्पनियों और उनकी शाखाओं, तथा साथ ही क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय विभागों मे हमेशा विविधता रहती है। (क्या प्रथम अंतरराष्ट्रीय (First International) से सम्बद्ध अपने व्यवसायों में कुछ अधिक सजातीय थे? क्या भूतकाल के लोकप्रिय मोर्चे जो कि यदा कदा संगठनो के द्वारा चलाए जाते थे व्यवसायिक सजातीयता के उदाहरण थे?) पहचान के गठन की प्रक्रिया, सामूहिक कार्यवाही और सामाजिक आन्दोलन व्यवसायिक ढाँचों के कर्ताओ के पदों पर पूरी तरह निर्भर नही करती है। वास्तव में सामाजिक संरचनाओं ने सामूहिक मतभेदों के निर्माण को जन्म दिया है लेकिन सामाजिक पहचान ने सामाजिक बातचीत, सामाजिक आन्दोलनों, संस्कृतियों और सन्निहित व्यक्तिपरकता को बढ़ावा दिया है।

2. श्रमिकों के दृष्टिकोण से, वास्तविक अर्थों में अंतरराष्ट्रीय जुड़ाव वैश्विक मूल्य श्रृंखला में पहले से ही वर्तमान संघर्षो में शामिल उपसंविदा विशेषतः किनारे से दूर रह कर विद्यमान है। यद्यपि सकारात्मक उदाहरण मौजूद हैं फिर भी यह जुड़ाव वास्तविक एकजुटता की गारंटी नही है।

3. श्रमिकों की एक भारी संख्या वैश्विक मूल्य श्रृंखला से बाहर है चाहे वह औपचारिक हो या अनौपचारिक, वेतन अर्जक या गैर–वैतनिक, पारम्परिक या गैर पारम्परिक। यह जानना आवश्यक है कि क्या इस साझा पहचान वाले बहिष्कार किये गए समूहों से एक वैश्विक आन्दोलन खडा किया जा सकता है।

कनाडा के स्टील श्रमिक मैक्सिको के खदान एवम् धातु श्रमिकों का समर्थन करते हैं।

लेटिन अमेरिका के मामले में समस्याऐं वैबस्टर द्वारा चिन्हित लोगों के लिए समान हैं। हर मामले में जो कि सामान्यतः श्रम नियमों के अधीन नहीं है अनौपचारिक क्षेत्र के महत्व को बतलाना आवश्यक है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की नई परिभाशा के अनुसार लेटिन अमेरिकी देशों मे अनौपचारिक व्यवसायों अथवा श्रम संरक्षण से रहित व्यवसायों मे लगे कामगारों का प्रतिशत औपचारिक कम्पनियों मे लगे हुए कुल श्रम संख्या का 40 से 70% तक है। अनौपचारिक क्षेत्र में बड़ी कम्पनियां भी उसी प्रकार शामिल हैं जैसे कि छोटी परन्तु विशेष तौर पर यह मुख्य रुप से उन कम्पनियों के लिए है जिनमें पाँच से कम श्रमिक हों। ऐसी छोटी इकाईयां लेटिन अमेरिका के सभी देशों मे बहुत बड़ी कम्पनियों का गठन करती हैं। इस क्षेत्र के श्रमिकों का कुछ हिस्सा वेतन लेने वालों का है परन्तु बहुत से लोग इनमें स्व–रोजगार अथवा पारिवारिक कम्पनियों में बिना वेतन के काम करते हैं। कमीशन पर आधारित कर्मचारियों को भी इसी क्षेत्र में शामिल किया जाना चाहिये। इस समय इस क्षेत्र के श्रम नियमों के लिए संघर्ष बहुत महत्वपूर्ण है। मुख्य श्रमिकों और उप–अनुबन्धित श्रमिकों के मध्य सम्बन्धों को देखते हुए अंतरराष्ट्रीय मूल्य श्रृंखला मे श्रमिकों की स्थिति भी एक प्रमुख मुद्दा है।

व्यवसायिक मतभेद के रुप में श्रम कानून और श्रमिक संगठनों की नीतियां हर देश में अलग हैं। श्रम कानूनों के सम्बन्ध में लेटिन अमेरिका के क्षेत्र को, उन देशों जिनमे अभी भी रूढ़ीवादी नवउदारवादी मॉडल (मेक्सिको और कोलंबिया उल्लेखनीय उदाहरण हैं) लागू है और वे जहां वैकल्पिक राज्य संचालित नीतियों को लागू किया जाता है (उदाहरण के लिए अर्जेन्टीना, उरुग्वे, वेनेजुएला, बोलिविया, ईक्वेडोर और ब्राजील), के बीच विभाजित किया जा सकता है। पहले चरण में संघ शक्ति और मजदूरों के अधिकारों मे गिरावट उल्लेखनीय है। दूसरे चरण में संघों के लिए कुछ पुनरुद्धार और श्रमिकों के लिए सुरक्षा प्रदान की गई। 1990 के दशक में जब लगभग पूरे उपमहाद्वीप में एक कठोर नवउदारवाद समाहित किया गया था, श्रमिकों के संरक्षण में उल्लेखनीय नुकसान

>>

हुआ था। यद्यपि इस शताब्दि की प्रभातबेला में क्षेत्र के कई भागों में श्रमिकों का भाग्य सकारात्मक दिशा मे बदलना शुरु हुआ। फिर भी, जहां कुछ देशों मे श्रम नियमों ने गैर–वैतनिक श्रमिकों को संगठनात्मक अधिकार दिये वहीं कुछ अन्य देशों ने नहीं दिये।

कुछ ऐसा ही संघ की नीतियों के साथ होता है। जबकि कुछ संगठन नवउदारवादी नीतियों को कोई महत्व नहीं देते, दूसरे संगठन उनके विरोध में काफी जुझारु हैं। इसके अलावा जहां कुछ संगठन श्रम की संकीर्ण परिभाषा पर ही प्रतिबद्ध हैं और मजदूरी भोगी श्रमिकों तक ही सीमित हैं, दूसरे संगठन और अधिक विस्तृत परिभाषा को भी खुले मन से स्वीकारते हैं। हालांकि आरम्भिक अवस्था में परन्तु सबसे महत्वपूर्ण है कि अंतरराष्ट्रीय एकता का प्रदर्शन वैश्विक परिसंघों के माध्यम से, उनके शाखा सचिवालयों, विभिन्न देशों के परिसंघों के मध्य समझौतों, कुछ चुनिंदा समस्याओं के लिए अभियान चला कर और अन्तर–सरकारी समझौतों के माध्यम से जैसे कि आई.एल.ओ. या दूसरे जो कि व्यापारिक समझौतों से जुड़े हुए हों, किया जाए।

दूसरे शब्दों में वैबस्टर द्वारा बतलाई गयी अंतरराष्ट्रीय प्रकार की एकजुटता अपने पूर्व विद्यमान मानवीय, उत्पादक व नियामक रुपों मे महत्वपूर्ण है। यद्यपि यह संभव है कि सामूहिक कार्यवाही और पहचान के 'तरलीकरण' के सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव व्यवसायों की संरचना, श्रम सीमा की तरलता, या वैश्विक बाजार के दबाव में आवश्यक नहीं हो फिर भी शायद श्रमिकों के आदर्शलोक को नुकसान अवश्य पहुचाती है। उन कम्युनिस्ट, समाजवादी, अराजकतावादी और सामाजिक–लोकतांत्रिक आदर्शलोकों, जिनका अस्तित्व किंचित मूलभूत शर्तों के साथ साथ पूँजीवादी समाज के विकल्प प्रदान करने के वायदे का पोषण करता है को सामान्यतः दूसरों के द्वारा नवीनीकृत किया गया या बदला गया है।

ज्यादा से ज्यादा जैसा कि वैबस्टर की तीन प्रकार की एकता में है सुसंगत सुधार नवउदारवादी व्यवस्था में देखे जा सकते है। ये भी सीमित है, उदाहरण के लिए वित्तीय प्रणाली के नियमन के लिए, या फिर वैश्विक स्तर पर पुराने प्रकार के काल्पनिक परोपकारी राज्य जैसे कि वर्ल्ड सोशल फोरम के लिए। ऐसा प्रतीत होता है कि अभी तक इसमें सम्मिलन की वह भावना और विचारशीलता, ना तो बौद्धिक चरित्र और ना ही कार्यान्विति के स्तर पर, आई है जो कि वैश्विक परियोजनाओं को अनुवादित कर सके। ■

> मिस्त्र से पत्र : गोबर थापने की (काउ डंग रॉलिंग) प्रविधि के विषय में

| *गोबर निदर्शन*

मेरे एक पूर्व विद्यार्थी ने जो दक्षिण सूडान के जूबा में कार्यरत है, पत्र लिख कर यह बताया कि ''मैं यहाँ निदर्शन की 'स्नोबाल प्रविधि' की व्याख्या करने की कोशिश कर रहा हूँ पर अफ्रीका के लोगों के लिए यह बहुत क्लिष्ट बन गया क्योंकि 'स्नोबाल क्या है?' के विषय में उनको कोई प्रारम्भिक ज्ञान भी नहीं है।

अतः मैंने उन्हें यह प्रक्रिया समझायी कि स्नोबाल को किस प्रकार 'गोल' किया जाता है और वह किस प्रकार बड़ी एवं और बड़ी होती जाती है। फिर मैंने यह पूछा कि क्या यहाँ ऐसी कोई वस्तु है जिसे आप जानते हों और जो लुढ़काने (रोल करने) पर बड़ी एवं और बड़ी होती जाती हो। इस प्रकार हम निदर्शन की इस 'स्नोबाल' प्रविधि को कोई अफ्रीकन नाम दे सकते हैं।

एक लम्बे मौन के उपरान्त प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे एक प्रशिक्षु ने पीछे से उठ कर बताया कि 'इस प्रकार से तो हम गाय के गोबर (काउ डंग) को लुढ़काते हैं।'

अतः अब 'स्नोबाल प्रविधि' को 'काउ डंग रॉलिंग' प्रविधि कहा जाने लगा है।

आप सम्भवतया इस विचार को आई. एस. ए. के सहयोगी मित्रों के साथ विमर्श का भाग बनाना चाहें विशेषतः माइकल बुरावे के साथ इस विचार का आदान प्रदान करें।

सम्मान सहित,

रे ज्यूरिटिनि
सेन्टर फार माइग्रेशनस् एण्ड रिफ्यूजी स्टडीज, अमेरिकन यूनिवर्सिटी ऑफ काहिरा

> पाउलिस्टा सम्पादकीय टीम का परिचय

प्रत्येक अंक में हम उन कार्यरत सम्पादकीय दलों में से एक का परिचय प्रस्तुत करेंगे जो 'ग्लोबल डायलाग' के अनुवाद एवं उसके प्रकाशन में सहयोगरत है।

युवा पाउलिस्टा साथी – बांये से दांये जुलियाना तांची, एन्ड्रेजा गालि, पैड्रो मैनसिनि, रेनाटा प्रीटरलान, फेबियो स्यूनोडा, डिमिट्री फर्नान्डीज एवं गुस्टावो तानीगुटि

विश्वभर में 'ग्लोबल डायलाग' के पाठकों को हम प्रसन्नता के साथ ब्राजील की क्षेत्रीय सम्पादकीय टीम का परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं। हम इस तथ्य के कारण अत्यन्त उत्तेजित हैं कि हम सब एक ऐसे प्रकाशन में सहयोग कर रहे हैं जिसके माध्यम से अधिकांशतः विविधतामूलक क्षेत्रों से उन अनुभवों एवं सूचनाओं का विनियम सम्भव हुआ है जो समाजशास्त्र से सम्बद्ध हैं। हमें आशा है कि अनुभवों एवं सूचनाओं के आदान प्रदान का यह क्षेत्र और व्यापक एवं मजबूत होगा साथ ही विमर्श के अवसरों का विस्तार होगा। हमारी टीम के सदस्यों, जिसे 'द पाउलिस्टा टीम' भी कहा जाता है, का संक्षिप्त परिचय आपके सामने प्रस्तुत है:

एन्ड्रेजा टोनासो गालि ने 'यूनिवर्सिडाड द साओ पाउलो (यू. एस. पी.) से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र की डिग्री प्राप्त की है एवं वर्तमान में वह समाजशास्त्र विभाग में स्नातक विद्यार्थी है और प्रजातीय सम्बन्ध तथा 'ब्लैक आन्दोलन' विषयों का अध्ययन कर रही है। टोनासो गालि विश्वविद्यालय विस्तार के एक प्रोजेक्ट 'एडयूकार पारा अ मुण्डो' से भी जुड़ी हैं जो कि लोकप्रिय/जन शिक्षा, प्रवसन एवं मानवाधिकार विषय के अध्ययन से सम्बद्ध है –

डिमिट्री सरबानसिनी फर्नान्डीज ने सन् 2004 में समाज विज्ञान की 'फर्स्ट डिग्री' के साथ ग्रेजुएशन किया तत्पश्चात् यू. एस. पी. से सन् 2010 में समाजशास्त्र में पी एच डी की उपाधि प्राप्त की। फर्नान्डीज ने 2008 में 'FAPESP स्कालरशिप' प्राप्त कर पेरिस, फ्रान्स के 'इकॉल डस हाउटस इट्यूडस एन साइंसेज सोशियालेस' में समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रारम्भ किया। वर्तमान में यू एस पी में फर्नान्डीज सामाजिक इतिहास के क्षेत्र में पोस्ट डाक्टरल अनुसंधान में संलग्न हैं। यह अनुसंधान 1970 के दशक में साम्बा प्रतीकात्मक प्रतिनिधान एवं सांस्कृतिक मजबूती की अफ्रो–ब्राजीलियन राजनीति के मध्य सम्बन्धों से जुड़ा है।

फेबियो सिल्वा स्यूनोडा ने 'यूर्निवर्सिडाड एस्टाडुअल पाउलिस्टा' (UNESP/Marlia) से समाज विज्ञान में स्नातक डिग्री प्राप्त की। वर्तमान में स्यूनोडा समाजशास्त्र के स्नातकोत्तर कोर्स के विद्यार्थी हैं जहाँ वह तानाशाही के दौर के उपरान्त के ब्राजील में मानवाधिकारों के लिए मिलीटेन्ट्स विषय पर शोध में संलग्न हैं।

गुस्टावो टाकेशी तानीगुटि ने 'यूनिवर्सिडाड फेडरल ड साओ कार्लोस (UFSCar) से समाज विज्ञान में स्नातक की डिग्री प्राप्त की। वर्तमान में तानी गुटि USP (यू एस पी) में शोध विद्यार्थी है। जापान से ब्राजील की ओर हुआ प्रवसन इसके शोध का विषय है। इसके साथ ही कार्य का समाजशास्त्र, आर्थिक समाज शास्त्र एवं प्रवसन सम्बन्धी विषय के प्रति उनकी रूचि एवं अनुभव हैं। समाज–विज्ञान की पत्रिका 'प्लूरल' (Plural) के सम्पादक मंडल के तानीगुटि सदस्य हैं। साथ ही नगरीय मानवशास्त्रीय समूह 'न्यूक्लिओ द एन्थ्रोपोलोजिया अरबाना' (NAU-USP) के साथ तानी गुटि एक अनुसंधानकर्ता के रूप में सम्बद्ध हैं।

जुलियाना तांची ने यूनिवर्सिडाड फेडरल ड साओ कार्लोस (UFSCar) से समाज विज्ञान में स्नातक की डिग्री प्राप्त की साथ ही वहीं से स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। वर्तमान में वे यूनिवर्सिडाड ड साओ पाउलो में अनुसंधान विद्यार्थी हैं और पुनः स्थापित न्याय हेतु प्रयास से सम्बद्ध विषय का अध्ययन कर रही हैं। 'संघर्ष प्रबन्धन' एवं 'दण्ड का समाज शास्त्र' उनकी रूचि के विषय हैं। न्यूक्लिओ ड एन्थ्रोपोलोजिया डो डारियटो (USP) एवं ग्रुपो ड एस्टयूडाज डा वायोलेन्सिया इ एडमिनिस्ट्राकाउ ड कान्फ्लिटॉज (UFSCar) नामक समूहों की भी वे सदस्य हैं।

पैड्रो फैलिप ड एन्डराडे मैनसिनि ने द यू एस पी (USP) से समाज विज्ञान में स्नातक की डिग्री प्राप्त की है। वर्तमान में मैनसिनि आभासी यथार्थ में सामाजिकता (सोसयेबिलिटी इन वर्चुअल रियलिटीज) विषय के साथ सोश्यल मीडिया (सामाजिक संचार) में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त करने की प्रक्रिया में हैं। इसके अतिरिक्त USP में स्नातकोत्तर विद्यार्थियों के लिए प्रकाशित समाज शास्त्र पत्रिका 'प्लूरल' (Plural) के सम्पादक मंडल के वे सदस्य हैं।

रेनाटा प्रीटरलान ने USP से स्नातकोत्तर डिग्री समाजशास्त्र में प्राप्त की है। वर्तमान में प्रीटरलान 'साओ पाउलो की तरफ बोलिवियन प्रवसन' (Bolivian Immigration to Sao Paulo) विषय का अध्ययन कर रही हैं। USP से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर उन्होंने स्नातक डिग्री प्राप्त की है। नगरीय मानवशास्त्र के अन्तर्गत कार्यरत प्रवसन अध्ययन समूह प्रयोगशाला की वे सदस्य हैं साथ ही विस्तार परियोजना 'विश्व के लिए शिक्षा' का भी वह भाग हैं। ■

इस्लाम का समाजशास्त्र से मिलन – आजाद विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित धार्मिक अध्यापक डा. सईद मोहम्मद सगाफी ईरानी समाजशास्त्र के वरिष्ठ सदस्य डा. गोलाम्बास टवासोली के साथ

> मध्य पूर्व में समाजशास्त्र की गतिशीलता

सईद फरीद अलातास, समाजशास्त्र विभाग, नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर

मध्य पूर्व में एवं मध्य पूर्व के समाजशास्त्र की पहली बैठक, जो कि भविष्य में प्रादेशिक बैठकों की श्रृंखला बन सकती है, 28 एवं 29 मई 2011 को तेहरान में हुई। ''सामाजिक चिन्तन एवं समकालीन मध्य पूर्व में समाजशास्त्र पर प्रादेशिक सम्मेलन'' शीर्षक वाली बैठक ने प्रदेश और उसके परे अरबी, ईरानी और तुर्की समाजशास्त्रियों को एकजुट किया। इस सम्मेलन का आयोजन ईरानी समाजशास्त्रीय संघ ने अंतर्राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय समिति के तत्वावधान में, इस्तानबुल फाउण्डेशन फॉर साईन्स एण्ड कल्चर, इस्लामिक रिपब्लिक ऑफ ईरान की नेशनल लाइब्रेरी एण्ड आर्काइव्ज, मशाद स्थित इंस्टीट्यूट फॉर द स्टडी आफ रिलिजन एण्ड थोट, सेन्टर फॉर इण्टरनेशनल साइंटिफिक स्टडीज एण्ड कोलेबोरेशन एवं जमी–शेनासन प्रकाशन के सामाजिक विज्ञान संकाय शाखा के सहयोग से हुआ। दो दिनों के दौरान करीबन् 50 पत्र प्रस्तुत किये गये, जिनमें से आधे फारसी में थे।

प्रारंभिक भाषण माइकल बुरावे एवं ईरानी समाजशास्त्र के वरिष्ठ सदस्य, गोलाम्बास टवासोली ने दिया। बुरावे ने अपने विचार, सम्मेलन का सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा अर्थात् मध्य पूर्व में क्षेत्रीय समाजशास्त्र की स्थापना, पर केन्द्रित किये। उनके अनुसार ऐसे समाजशास्त्र के द्वारा न सिर्फ राष्ट्रों के अन्तर्गत बल्कि राष्ट्रों के आर पार होने वाली प्रक्रियाओं को भी बेहतर समझा जा सकेगा। बुरावे मध्य पूर्व को वैश्विक समाजशास्त्र की संभावनाओं के परीक्षण के रूप में देखते हैं कि किस हद तक एक क्षेत्र समाजशास्त्र के सार्वभौमिकरण में योगदान दे सकता है। टवासोली ने बुरावे के साथ सहमत होते हुए, सामाजिक चिन्तन में वैकल्पिक परिप्रेक्ष्यों की तरफ ध्यान आकर्षित किया। उनके अनुसार समाजशास्त्र में कई ऐसे विचार हैं जैसे कि नागरिक समाज जिनका उद्भव केवल ग्रीस में ही नहीं अपितु इस्लाम–पूर्व या इस्लामिक ईरान में पाया जाता है।

मध्यपूर्व में सामान्य तौर पर समाजशास्त्रीय चर्चा समाजशास्त्र की स्थिति का आलोचनात्मक मूल्यांकन एवं पश्चिमी परम्पराओं के विकल्प के रूप में मध्यपूर्वी विकल्पों की आवश्यकता पर जोर देती है। यह सम्मेलन भी इससे अलग नहीं था। टीना उस, सारी हनाफी, माइकल वुहन एवं ऐब्राहिम टॉफिग के द्वारा प्रस्तुत पत्रों में मध्य पूर्व में समाजशास्त्र की समस्याग्रस्त स्थिति जैसे पूर्वदेशीयता (ओरियण्टिलिज्म) या शैक्षणिक निर्भरता पर चर्चा की गई। प्रतिभागियों ने यह भी कहा कि उनका उद्देश्य पश्चिम पर प्रहार करना नहीं, अपितु स्वस्थ समाजशास्त्र की रचना है। इसका अर्थ है कि हमें पश्चिमी ज्ञान के अलावा मध्य–पूर्व एवं अन्य क्षेत्रों को अवधारणाओं व सिद्धान्तों के स्त्रोत के रूप में सम्मिलित कर ज्ञान के क्षितिज का विस्तार करना चाहिए। वस्तुतः हम कई बाद देशज या वैकल्पिक समाजशास्त्र का उद्घोष सुनते हैं। इस सम्मेलन में न सिर्फ इन उद्घोषों पर चर्चा हुई बल्कि सामाजिक चिन्तन के लिए मध्य–पूर्वी स्त्रोत भी प्रस्तुत किये गये।

सैत ओजरवार्ली, मोहम्मद टवाकोल एवं सैयद जवाद मिरि ने उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी के बहुत सारे ईरानी व तुर्की विचारकों के कार्यों की चर्चा की एवं इनके चिन्तन की विषय वस्तु को मध्य–पूर्वीय समाजशास्त्र की स्थापना के लिये विचार करने की अनुशंसा की। इसके अतिरिक्त, बियुक मोहम्मदी के अनुसार मध्य पूर्व समाजशास्त्र के स्त्रोत के रूप में सिर्फ सीमित रूप से परिभाषित सामाजिक चिन्तन ही नहीं बल्कि इसमें साहित्य को भी सम्मिलित करना चाहिए। इस तरह का समाजशास्त्र पश्चिमी चिन्तन को उपेक्षित नहीं करता बल्कि कलात्मक रूप से आत्मसात करता है। ओजरवार्ली ने उन्नीसवीं शताब्दी के कई ओटोमन विचारकों द्वारा इसके उपयोग पर प्रकाश डाला।

मध्यपूर्व के समाजशास्त्र की चर्चाओं में एक अन्य मुख्य मुद्दा है इस्लाम व समाजशास्त्र में सम्बन्ध। इस क्षेत्र में शिक्षण एवं शोध के वृहद अनुभव के आधार पर रियाज हसन इस्लाम के समाजशास्त्र के पाठ्यक्रम की चर्चा करते हैं। यह इस प्रश्न को उठाता है कि क्या समाजशास्त्रीय एवं धार्मिक उपागम में, विशिष्ट तौर पर इस्लाम की उत्पत्ति की व्याख्या करते हुए किसी प्रकार का विरोध था। सारा शरीयती के पत्र में इस समस्याग्रस्त सम्बन्ध पर चर्चा की गई व उन्होंने अपने आप को इस्लामिक समाजशास्त्र के विचार से दूर कर लिया।

इसके समानांतर इस सम्मेलन में कई मौलवियों ने भी प्रस्तुतीकरण दिया और इस्लामिक समाजशास्त्र के विचार को आगे बढ़ाया। उन्होंने पश्चिमी समाजशास्त्र के प्रति द्वेषभावपूर्ण रवैया अपनाया।

अधिकतर प्रतिभागी वार्षिक या द्वैवार्षिक आधार पर मिलने के इच्छुक थे। सामाजिक चिन्तन पर अगला सम्मेलन 2011 में मध्यपूर्व में इस्तानबुल में करने की योजना पर कार्य चल रहा है। इस सम्मेलन की समीक्षात्मक भावना को देखते हुए, यह भी सुझाव दिया गया कि ''मध्य पूर्व'' शब्द को हटा देना चाहिए क्योंकि क्षेत्र को उल्लेख करना वांछनीय नहीं है जैसा कि औपनिवेशिक व्यापार एवं समाज के डच छात्र जे. सी. वॉन ल्यूर ने एक बार कहा था ''जहाज का फर्श, किले की प्राचीर, व्यापार गृह की उच्च दीर्घा''। ■

हिचाम यजा एवं रिजवान साबिर उस पुस्तकालय के बाहर जहाँ विवादास्पद अल–कायदा नियम–पुस्तक पाई गई

> अकादमिक स्वतन्त्रता पर आक्रमण: नाटिंगघम द्वय की घटना एवं एक सजग आवाज

आल्फ गुनवाल्ड निल्सन, बर्गेन विश्वविद्यालय, नार्वे

नाटिंघम विश्वविद्यालय (UoN) में हाल में घटित घटनाओं से यह संकेत मिलते हैं कि 'आतंकवाद के विरूद्ध युद्ध' के नाम पर अकादमिक स्वतन्त्रता का हनन हो रहा है। अनुसंधान की स्वतन्त्रता, बिना अनुशासनात्मक कार्यवाही के डर से शोध परिणामों को सार्वजनिक करना, नागरिकीय स्वतन्त्रता के पक्षों पर न केवल प्रहार किये गये हैं अपितु निष्कासन जैसी कार्यवाही हो रही हैं।

इस वर्ष 4 मई को डा. रॉड थॉर्नटन, जो कि एक ब्रितानी सैनिक हैं और अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद एवं प्रति–हिंसा विषयों के विशेषज्ञ हैं, को राजनीति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के अध्ययन केन्द्र (SPIR) के शिक्षक पद से निलम्बित कर दिया गया। डा. थॉर्नटन ने अपने एक प्रकाशित शोध लेख में यह दावा किया कि UoN में कार्यरत कुछ विशिष्ट उच्चस्तरीय व्यक्तियों की प्रत्यक्ष भूमिका के फलस्वरूप दो निर्दोष मुस्लिम–रिजवान साबिर जो SPIR में स्नातकोत्तर कक्षा का विद्यार्थी है और हिचाम यजा जो आधुनिक भाषा अध्ययन केन्द्र में कार्यरत है और एक राजनीतिक पत्रिका 'सीजफायर' (ceasefire) का सम्पादक है को गलत तरीके से गिरफ्तार किया गया। ये दोनों निर्दोष मुस्लिम तीन वर्ष पहले मई 2008 में आतंकवादी होने की शंका के कारण गिरफ्तार हुए।

इन दोनों (नाटिंघम टू) को गिरफ्तारी के बाद 6 दिन तक कारागार में रखा गया और फिर बिना किसी आरोप के छोड़ दिया गया। यह गिरफ्तारी हिचाम यजा के एक सहयोगी की इस खोज के बाद हुई थी कि यहा के कार्यालय के कम्प्यूटर के डेस्कटॉप पर दो एकेडमिक आलेख सहित एक डाक्यूमेण्ट है जिसका शीर्षक 'द अल कायदा ट्रेनिंग मेनुअल' है। साबिर ने मूलतः ये डाक्यूमेण्ट्स अपनी स्नातकोत्तर डिग्री से सम्बद्ध ग्रन्थ 'रेडीकल इस्लाम' को तैयार करने हेतु डाउनलोड किये थे। साबिर ने इन डाक्यूमेण्टस् को अपने मित्र यजा को समीक्षा हेतु भेजा था ताकि वह उसके विचार जान सके। यह तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि साबिर ने अल कायदा के इस मेनुअल को अमेरिका के जस्टिस विभाग (US Department of Justice) की वेबसाइट से प्राप्त किया था।

डा. थॉर्नटन ने अपने लेख में यह विस्तार से बताया है कि इस डाक्यूमेण्ट के मिलने के बाद UoN को सरकार के दिशा निर्देशों के अनुरूप जोखिम का मूल्यांकन करना चाहिए था जो उसका दायित्व था पर इस दायित्व के निर्वाह के बजाय विश्वविद्यालय प्रबन्धन ने सीधा पुलिस से सम्पर्क किया। परिणामस्वरूप दो निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया। थॉर्नटन ने न केवल इन तथ्यों को बताया अपितु आगे यह भी स्पष्ट किया कि इन दोनों निर्दोष व्यक्तियों को रिहा किये जाने के बाद भी विश्वविद्यालय प्रबन्धन जोरदार तरीके से यह प्रयास करता रहा कि इन दोनों व्यक्तियों एवं इनके समर्थकों को विश्वविद्यालय परिसर में बदनाम कर दिया जाय ताकि UoN के इस दावे को मिल रही चुनौती को खत्म किया जा सके कि यह शोध स्त्रोत अवैध हैं और इन दोनों व्यक्तियों की गिरफ्तारी न्यायोचित थी।

द UoN ने डा. थॉर्नटन के दावे को 'आधारहीन' बताया एवं यह तर्क दिया कि यह दावा UoN के सहयोगियों को बदनाम करने का प्रयास है। परन्तु इस तर्क के पक्ष में वे जनता के सम्मुख कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहे। दूसरे शब्दों में डा. थॉर्नटन के निलम्बन का उद्देश्य एक सजग नागरिक को मौन करना था।

डा. थॉर्नटन का आलेख परिश्रम से तैयार एक शोध प्रतिवेदन है जिसमें दावों की पुष्टि हेतु सभी साक्ष्य सम्मिलित हैं। 112 से अधिक पृष्ठों में सिमटा हुआ यह प्रतिवेदन सूचनाओं की स्वतन्त्रता अधिनियम के अन्तर्गत एकत्रित किये गये तथ्यों पर आधारित है जो तीन वर्ष की अवधि में संकलित किये गये। डा. थॉर्नटन ने विश्वविद्यालय की आन्तरिक सूचनाओं को भी अपने प्रतिवेदन में स्थान दिया साथ ही फारिन्सिक विश्लेषण को भी सम्मिलित किया। यह भी ध्यान देने की बात है कि इस प्रतिवेदन को प्रकाशित करने के पूर्व डा. थार्नटन ने उन सभी आन्तरिक स्थलों से सम्पर्क किया जहाँ UoN के विरूद्ध अपनी शिकायतों को प्रस्तुत किया जा सके।

मुख्यतः यही कारण है कि डा. थॉर्नटन का प्रतिवेदन एवं UoN तथा उसके आचरण की आलोचना यह साबित करती है कि अकादमिक स्वतन्त्रता का हनन किया जा रहा है। इस घटनाक्रम में न्याय तभी सम्भव होगा जब डा. थॉर्नटन के निलम्बन को तत्काल समाप्त कर उन्हें बहाल किया जाय तथा UoN द्वारा एक स्वतन्त्र सार्वजनिक जाँच समिति के सम्मुख अपने उन दावों के पक्ष में उन साक्ष्यों को प्रस्तुत करे जो डा. थॉर्नटन के प्रतिवेदन के विरूद्ध हैं।

कृपया नॉम चोमस्की एवं अन्य के द्वारा इस प्रकरण के विरूद्ध चलाये गये हस्ताक्षर अभियान में स्वयं को सम्मिलित करें। S.W.A.N. पिटीशन पर अपने हस्ताक्षर हेतु कृपया इस वेबसाईट को प्रयुक्त करें : http://www.thepetitionsite.com/1/support-whistleblower-at-nottingham/. ■